ओ३म्

तमसो मा ज्योतिर्गमय

अथ ब्रह्म ज्योतिर्महायज्ञ

संकलनकर्त्ता
पं. वेदभूषण
डा. सुनीति, पी. एच. डी.

सम्पादक
धर्मदेव निरुक्ताचार्य

अन्तर्राष्ट्रीय वेद प्रतिष्ठान
ज्ञान गंगा, सुलतान बाजार,
हैदराबाद, दक्षिण भारत

प्रकाशक :
शशिकान्त आर्य

अन्तर्राष्ट्रीय वेद प्रतिष्ठान
ज्ञान गंगा, सुलतान बाजार,
हैदराबाद. 500027
दक्षिण भारत

न
प
अ

अंश
स्तु
प्रस्तु

आव
यह
मन्त्रों

पग ब
प्रात:
मन्त्रों से
जा सक

दायक हो
भाव से

यजुर्वेद २३ वें अध्याय मन्त्र ४७ के प्रथम भाग में एक प्रश्न है। "किस्वित् सूर्य समं ज्योतिः" सूर्य के समान कौनसी ज्योति है? इस प्रश्न का उत्तर इसके अगले मन्त्र में दिया है। ब्रह्म सूर्यं समं ज्योतिः! सूर्य की ज्योति से भी महान, अनन्त ज्योतिर्मय वह ब्रह्म है जिसे हिरण्यगर्भ कहते हैं।

सौर मण्डल में दृष्टिगोचर होने वाले इस देदीप्यमान सूर्य जिसे न जाने कितने सूर्य उस असीम अनन्त ब्रह्म में कण के समान बिखरे पड़े है। उसी ब्रह्म की अनन्त ज्योति का साक्षात्कार, उसी का अनुभवन जीवन का महान् व अन्तिम लक्ष्य है।

यह वैदिक ब्रह्म ज्योति महायज्ञ उसी साधना का एक लघु अंश है। "तमसो मा ज्योतिर्गमय" की विस्तृत व्याख्या, एक विनम्र स्तुति, प्रार्थना, परम पवित्र वेद के ज्योति सम्बन्धी मन्त्रों द्वारा प्रस्तुत की गई है।

चातुर्मास के सप्तदिवसीय यज्ञों के लिए इस प्रकार की विशेष आवश्यकता अनुभव की जाती रही है। इसी दिशा में किया गया यह एक तुच्छ प्रयास है। चारों वेदों में से ही समस्त ज्योति विषयक मन्त्रों को चुन कर उक्त ज्योतिर्पुञ्ज संग्रहित किया गया है।

ज्योति पथ के पथिकों के लिए, अन्धकार से प्रकाश की ओर पग बढ़ाने वालों के लिए, यह महायज्ञ अत्यन्त सहायक सिद्ध होगा। प्रातः २॥ घण्टे तथा सायं दो घण्टों में मिलाकर प्रति दिन इन पूरे मन्त्रों से अथवा प्रतिदिन कुछ मन्त्रों से भी सहज ही आहुतियाँ दी जा सकती हैं।

ब्रह्म ज्योति के पिपासुओं के लिए यह पेय अवश्य ही तृप्ति-दायक होगा। आशा है वेद प्रेमी धार्मिक जन इस महायज्ञ को प्रेम भाव से करेंगे कराएँगे।

—वेदभूषण

कुछ निर्देश

यज्ञ कुण्ड का परिमाण महर्षि दयानन्द सरस्वती रचित संस्कार विधि के अनुसार कम से कम डेढ़ हाथ सम चौरस इतना ही गहरा और नीचे की चौड़ाई ऊपरी भाग का चतुर्थ भाग हो, बनाया जाए।

यज्ञ मण्डप में पवित्र स्वच्छ वस्त्र धारण कर तथा प्रवेश से पूर्व हाथ, मुख व पैर धोकर प्रवेश करें।

जहां तक बन पडे यज्ञ गोघृत की आहुतिओं से हो और सामग्री भी शास्त्रोक्त विधि पूर्वक बनी हुई होनी चाहिए।

यज्ञ कुण्ड के चारों दिशाओं में बैठने वाले ब्रह्मचारी, गृहस्थ वानप्रस्थ के लिए यज्ञोपवीत का धारण किया जाना अनिवार्य है। अन्यथा यज्ञ से पूर्व उपवीत धारण कराया जाए। स्त्री-पुरुष दोनों के लिए यह नियम समान है।

समिदाधान चन्दन काष्ठ से किया जाना उत्तम होगा।

यजमान सदा ध्यान रक्खें कि–यज्ञ कराने वाले विद्वान् पुरुषों को यथासामर्थ्य अधिक से अधिक दक्षिणा श्रद्धा पूर्वक प्रदान करें!

यज्ञ कर्त्ताओं के अतिरिक्त मण्डप में प्रवेश निषिद्ध होना चाहिए। यज्ञकर्ता भी यज्ञ के समय ही मण्डप में प्रविष्ट हों! मण्डप में पवित्रता, शुचिता का विशेष ध्यान रक्खा जाना चाहिए!

प्रतिदिन महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रदर्शित रचित यज्ञ विधि यथावत् की जाए! प्रातःकाल सूर्योज्योति० मन्त्रों के पश्चात् और सायंकाल अग्निर्ज्योति० मन्त्रों के उपरान्त वैदिक ब्रह्म ज्योति महायज्ञ के विशेष मन्त्रों से आहुति दी जानी चाहिए!

अन्य ऋत्विज् आदि का वरण व व्यवस्था महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा निर्मित विधि एवं आदेश के अनुसार ही की जानी चाहिए।

अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनाः

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद्भद्रं तन्न आ सुव।

यजु० ३०। ३।

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता. समग्र ऐश्वर्ययुक्त शुद्धस्वरूप सब सुखों के दाता परमेश्वर! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण. दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कर दीजिए. जो कल्याणकारक गुण. कर्म. स्वभाव और पदार्थ हैं वह सब हम को प्राप्त कीजिए।

हे देव सवितर् - विश्वकर्ता. शुद्ध रूप महान् है.
दुरितानि दुर्गुण दुर्व्यसन से. मुक्त करता त्राण है.
आचरण दो शुद्ध मुझ में. भद्र भावोद्गान है.
पापहर्ता शुद्धकर्ता. जो सुखद भगवान् है।

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।

यजु० १३। ४।

जो स्वप्रकाशस्वरूप और जिसने प्रकाश करनेहारे सूर्य चन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं. जो उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का प्रसिद्ध स्वामी एक ही चेतनस्वरूप था. जो सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व वर्तमान था. जो इस भूमि और सूर्यादि को धारण कर रहा है. हम लोग उस सुखस्वरूप शुद्ध परमात्मा के लिए ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अति प्रेम से विशेष भक्ति किया करें।

वर्तमान जो प्रलय काल में. प्राणिमात्र का स्वामी है.
सूर्य चंद्र तारे अन्तर् में. सब का अन्तर्यामी है.
द्यौ पृथ्वी और अन्तरिक्ष का. आश्रय वह कहलाता है.
कौन नियन्ता? अर्चन किसका? जो सुखरूप विधाता है।

य आत्मदा बलदा यस्य विश्वं उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।

यजु० २५ । १३ ।

जो आत्मज्ञान का दाता शरीर, आत्मा और समाज के बल का देनेहारा जिस की सब विद्वान् लोग उपासना करते हैं और जिसका प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन और न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं। जिसका आश्रय ही मोक्षसुखदायक है, जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस सुख-स्वरूप सकल ज्ञान के देनेहारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मा और अन्तःकरण से भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें।

आत्मज्ञान और बल का दाता, विश्व जिसे अपनाता है,
देव प्रशंसा जिसकी करते, वही मरण का दाता है,
जिसकी दया असीम से, मिलता सबको जीवन दान है,
कौन नियन्ता ? अर्चन किसका ? जो सुखरूप महान् है।

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।

यजु० २३ । ३

जो प्राणवाले और अप्राणिरूप जगत् का अपनी अनन्त महिमा से एक ही राजा विराजमान है जो इस मनुष्यादि और गौ आदि प्राणियों के शरीर की रचना करता है, हम उस सुखस्वरूप सकलैश्वर्य के देनेहारे परमात्मा के लिये अपनी सकल उत्तम सामग्री से विशेष भक्ति करें।

महिमा से अनन्त जो अपनी. वह विराट् बन जाता है.
चर और अचर सकल जगत् का. वह सम्राट् कहाता है.
दोपाए चौपायों को. प्रभु देता संतत प्राण है.
कौन नियन्ता? अर्चन किसका? जो सुखरूप महान् है ।

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः ।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।

यजु० ३२ । ६ ।

जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण स्वभाव वाले सूर्य आदि और भूमि को धारण. जिस जगदीश्वर ने सुख को धारण और जिस ईश्वर ने दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है. जो आकाश में सब लोक लोकान्तरों को विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं. वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है. हम लोग उस सुखदायक कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिये सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें ।

उग्र सूर्य, पृथ्वी, शशि तारे. किया है जिसने भीतर धारण.
वही मोक्ष सुख देने हारा. सभी दुःखों का करे निवारण.
खग चर जैसे सभी ग्रहों को. घुमा रहा अन्तर्धान है.
कौन नियन्ता? अर्चन किसका? जो सुखरूप महान् है ।

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।

ऋ० १० । १२१ । १० ।

हे सब प्रजा के स्वामी परमात्मा ! आप से भिन्न दूसरा कोई उन इन सब उत्पन्न हुए जड़ चेतनादिकों को नहीं तिरस्कार करता है अर्थात् आप सर्वोपरि हैं. जिस जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग आप का आश्रय लेवें और वाञ्छा करें. वह वह कामना हमारी सिद्ध होवे जिस से हम लोग धनैश्वर्यों के स्वामी होवें ।

हे प्रजापति ! घट-घट व्यापक तुम बिन कौन रचे जग को.
कभी तिरस्कृत नहिं करते हो. मनुज कीट पशु या खग को.
भक्त कामना लेकर आए. अभयपूर्ण वरदान है.
हों ऐश्वर्य पति. धन स्वामी. यही विनय भगवान् है ।

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ।

यजु० ३२ । १० ।

हे मनुष्यो ! वह परमात्मा अपने लोगों को भ्राता के समान सुखदायक. सकल जगत् का उत्पादक. वह सब कामों का पूर्ण करने हारा. सम्पूर्ण लोकमात्र और नाम. स्थान. जन्मों को जानता है और जिस सांसारिक सुख दुःख से रहित नित्यानन्दयुक्त मोक्षस्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में मोक्ष को प्राप्त होके विद्वान् लोग स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं. वही परमात्मा अपना गुरु आचार्य राजा और न्यायाधीश है. अपने लोग मिल के सदा उस की भक्ति किया करें ।

है वह सुखदायक भ्राता. सकल जगत् का धाता है.
नाम स्थान. भुवन. जन्मों का अखिल विश्व का. ज्ञाता है.
देव मुक्त हो जहाँ विचरते. मोक्ष परम कल्याण है.
कौन गुरु और सखा हमारा ? सुखद रूप भगवान् है ।

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम ।

यजु० ४० । १६ ।

हे स्वप्रकाश ज्ञानस्वरूप सब जगत् के प्रकाश करने हारे सकल सुखदाता परमेश्वर ! आप जिस से सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं. कृपा कर के हम लोगों को विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञान और उत्तम कर्म प्राप्त कराइए और हम से कुटिलतायुक्त पापरूप कर्म को दूर कीजिये. इस कारण हम लोग आप की बहुत प्रकार की स्तुतिरूप नम्रतापूर्वक प्रशंसा सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें ।

हे अग्ने ज्योतिर्मय स्वामी. हमें सुपथ पर सदा बढ़ाओ.
हम हों धनी. सुसम्पत् कामी. सदा ज्ञान के शिखर चढ़ाओ.
पाप कुटिल. दुष्कर्मों से. यह चिता रहा धीमान् है.
करें प्रार्थना हम सब उसकी. जो सुख रूप महान् है.

स्तुति. प्रार्थना. उपासना का भेद

हमें स्तुति प्रार्थना और उपासना के भेद को भी भली प्रकार समझ लेना चाहिए । स्तुति का अर्थ है. स्तवन. प्रशंसा या गुण गान और प्रार्थना का अर्थ है याचना. मांगना या अभ्यर्थना करना तथा उपासना का अर्थ है किसी के अत्यन्त निकट या पास बैठना जिससे उपास्य देव के गुणों को हम भी धारण कर सकें । उक्त मन्त्रों का पाठ सदा अर्थ के साथ करना चाहिए देखिए—संस्कार विधि पृष्ठ सं. २ ।

अथ स्वस्तिवाचनम्

ओ३म् अग्निमीळे पुरोहितं. यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ।
स नः पितेव सूनवेऽग्ने. सूपायनो भव । सचस्वा नः स्वस्तये ।

ऋक् १ । १ । १. ६ ।

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः. स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः ।
स्वस्ति पूषा असुरोदधातु नः. स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ।
स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै. सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः ।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये. स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ।
विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये. वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये ।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये. स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ।
स्वस्ति मित्रावरुणा. स्वस्ति पथ्ये रेवति । स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च. स्वस्ति नो अदिते कृधि ।
स्वस्ति पन्थामनु चरेम. सूर्याचन्द्रमसाविव । पुनर्ददताघ्नता. जानता सं गमेमहि ।

ऋक्० ५ । ५१ । ११–१५ ।

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां. मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य. यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।

ऋक्० ७ । ३५ । १५ ।

येभ्यो माता मधुमत् पिन्वते पयः. पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः ।
उक्थशुष्मान् वृषभराँ स्वप्नसस् ताँ.आदित्याँ अनुमदा स्वस्तये ।
नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा. बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः ।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो. दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ।
सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययु. रपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम् । ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्. महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये ।

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ. विश्वेदेवासो मनुषो यतिष्ठन ।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्. यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ।
येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः. समिद्धाग्निर्मनसा सप्त-होतृभिः । त आदित्या अभयं शर्म यच्छत. सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ।

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो. विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः ।
ते नः कृतादकृतादेनसस्. पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ।
भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहे. ऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम् ।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं. द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ।
सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं. सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् ।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागस. मस्रवन्तीमारुहेमा स्वस्तये ।

विश्वे यजत्रा अधिवोचतोतये. त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिहुतः ।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम. शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये ।

अपामीवामप विश्वामनाहुति. मपारातिं दुर्विदत्रामघायतः ।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनो. रुणः शर्म यच्छता स्वस्तये ।

अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते. प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि ।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभि. रति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ।

यं देवासोऽवथ वाजसातौ. यं शूरसाता मरुतो हिते धने ।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसि. मरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ।

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु. स्वस्त्य१प्सु वृजने स्वर्वति ।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु. स्वस्तिराये मरुतो दधातन ।

स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा. रेक्णस्वत्यभि या वाममेति ।
सा नो अमासो अरणे निपातु. स्वावेशा भवतु देव गोपा ।

ऋक्० १० । ६३ । ३–१६ ।

इषेत्वोर्जे त्वा. वायवस्थ. देवो वः सविता प्रार्पयतु. श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या. इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा व स्तेन ईशत. माघशंसो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात. बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ।

यजु० १ । १ ।

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतो ऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः। देवा नो यथा सदमिद् वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाᳬं रातिरभि नो निवर्त्तताम्। देवानाᳬं सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे।

यजु० २५। १४. १५।

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाᳬंसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।

यजु० २५। १८. १९. २१।

२ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ १र २र ३ १ २
अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि।
१ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ १ १ २ ३ १ २
त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः। देवेभिर्मानुषे जने।

साम० पू० १। १. २।

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः। वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे।

अथर्व० १। १। १।

अथ शान्तिकरणम्

शं न॑ इन्द्राग्नी भ॑वतामवो॑भिः. शं न इन्द्रावरु॑णा रातह॑व्या ।
शमिन्द्रासोमा॑ सुवि॒ताय॒ शं योः. शं न इन्द्रापूषणा॑ वाज॑सातौ ।
शं नो भगः शमु नः शंसो॑ अस्तु. शं नः पुर॑न्धिः शमु सन्तु राय॑ः । शं नः सत्यस्य॑ सुयम॑स्य शंसः. शं नो॑ अर्य॒मा पु॑रुजातो अ॑स्तु ।

शं नो॑ धाता शमु॑ धर्त्ता नो॑ अस्तु. शं न॑ उरू॒ची भ॑वतु स्वधाभि॑ः । शं रोद॑सी बृहती शं नो अद्रिः. शं नो॑ देवानां॑ सुहवा॑नि सन्तु ।

शं नो॑ अग्निर्ज्योति॑रनी॑को अस्तु. शं नो॑ मित्रावरु॑णाव॒श्विना शम् ।
शं नः सुकृतां॑ सुकृता॑नि सन्तु. शं न॑ इषि॒रो अ॒भि वा॑तु वात॑ः ।
शं नो द्यावा॑पृथिवी पूर्वहू॑तौ. शम॒न्तरि॑क्षं दृशये नो॑ अस्तु ।
शं न ओष॑धीर्व॒निनो॑ भवन्तु. शं नो॑ र॑जस॒स्पति॑रस्तु जिष्णुः ।
शं न इन्द्रो वसु॑भिर्दे॒वो अ॑स्तु. शमा॑दि॒त्येभि॒र् वरु॑णः सुशंस॑ः ।
शं नो॑ रुद्रोरु॒द्रेभि॒र्जला॑षः. शं नस् त्वष्टाग्नाभि॑रि॒ह शृणोतु ।
शं नः सोमो॑ भवतु ब्रह्म शं नः. शं नो ग्रावा॑णः शमु॑ सन्तु यज्ञाः । शं नः स्वरू॑णां मितयो॑ भवन्तु. शं नः प्रस्व॑ः शम्वस्तु वेदिः ।

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु. शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु ।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु. शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ।
शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः. शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः ।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु. शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ।
शं नो देवः सविता त्रायमाणः. शं नो भवन्तूषसो विभातीः ।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः. शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शंभुः ।
शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु. शं सरस्वती सह धीभिरस्तु ।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः. शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः ।

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु. शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः । शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः. शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ।

शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु. शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः । शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु. शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा । ऋक्० ७ । ३५ । १-१३ ॥

इन्द्रो विश्वस्य राजति । शं नो अस्तु. द्विपदे शं चतुष्पदे ।
शं नो वातः पवतां. शं नस्तपतु सूर्यः । शं नः कनिक्रदद् देवः. पर्जन्यो अभि वर्षतु ।

अहानि शं भवन्तु नः. शꣳ रात्रीः प्रति धीयताम् । शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः. शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या । शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ. शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः ।

शं नो देवी रभिष्टय. आपो भवन्तु पीतये । शं योरभि स्रवन्तु नः । यजु० ३६ । ८. १०. ११. १२ ।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः. पृथिवी शान्तिरापः शान्ति. रोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्. विश्वे देवाः शान्तिर्. ब्रह्म शान्तिः. सर्वꣳ शान्तिः. शान्तिरेव शान्तिः. सा मा शान्तिरेधि ।

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं. जीवेम शरदः शतꣳ. शृणुयाम शरदः शतं. प्र ब्रवाम शरदः शत. मदीनाः स्याम शरदः शतं. भूयश्च शरदः शतात् ।

यजु० ३६ । १७. २४ ।

यहां से छह मन्त्र रात्रिकाल में सोने से पूर्व बोलने के हैं—

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं. तदु सुप्तस्य तथैवैति । दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं. तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो. यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः । यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां. तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ।

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च. यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्न ऋते किंचन कर्म क्रियते. तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ।

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्. परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता. तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ।

यस्मिन्नृचः साम यजूंषि. यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभा-
विवाराः । यस्मिँश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां. तन्मे मनः शिव-
संकल्पमस्तु ।

सुषारथिरश्वानिव यन् मनुष्यान्. नेनीयतेऽ भीशुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं. यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ।

यजु० ३४ । १–६ ।

१ २ ३ २उ ३ १र २र ३ १र २र १ २ ३ १ २
स नः पवस्व शंगवे शं जनाय शमर्वते । शं राजन्नोषधीभ्यः ।

साम० उ० १ । १ । १ ।

अभयं नः करत्यन्तरिक्ष. मभयं द्यावापृथिवी उभे इमे ।
अभयं पश्चादभयं पुरस्ता. दुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ।
अभयं मित्रादभयममित्रा. दभयं ज्ञातादभयं परोक्षात् ।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः. सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ।

अथर्व० १९ । १५ । ५. ६ ।

अथ बृहद्यज्ञः

आचमन मन्त्र

ओ३म् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ।
ओ३म् अमृतापिधानमसि स्वाहा ।
ओ३म् सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ।

अङ्गस्पर्श मन्त्र

ओ३म् वाङ् म आस्येऽस्तु । ओ३म् नसोर्मे प्राणोऽस्तु ।
ओ३म् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु । ओ३म् कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ।
ओ३म् बाह्वोर्मे बलमस्तु । ओ३म् ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु ।
ओम् अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ।

घृत दीप प्रज्वलन

ओ३म् । भूर्भुवः स्वः ।

अग्न्याधान मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वर् द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा ।
तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ।

प्रदीपन मन्त्र

ओ३म् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथामयं च ।
अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ।

समिदाधान मन्त्र

निम्न मन्त्रों से एक एक समिधा की आहुति दें—

ओ३म् । अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्. तेनेध्यस्व. वर्धस्व. चेद्ध. वर्धय. चास्मान् प्रजया. पशुभिर्. ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे—इदं न मम । इससे एक

ओ३म् । समिधाग्निं दुवस्यत. घृतैर् बोधयतातिथिम् । आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा । इदमग्नये—इदं न मम ।

ओ३म् सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन । अग्नये जातवेदसे स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे—इदं न मम । इन दोनों से दूसरी

ओ३म् तंत्वा समिद्भिरङ्गिरो, घृतेन वर्धयामसि । बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा । इदमग्नयेऽङ्गिरसे—इदं न मम । इससे तीसरी

यज्ञफलप्राप्ति मन्त्र

निम्न मन्त्र से पाँच घृत की आहुतियाँ दें —

ओ३म् । अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्. तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय. चास्मान् प्रजया पशुभिर् ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे—इदं न मम ।

जल प्रसेचन मन्त्र

ओ३म् अदितेऽनुमन्यस्व । पूर्व दिशा में

ओ३म् अनुमतेऽनुमन्यस्व । पश्चिम दिशा में

ओ३म् सरस्वत्यनुमन्यस्व । उत्तर दिशा में

ओ३म् । देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय । दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ।

चारों दिशाओं में

आघारावाज्याहुति मन्त्र

ओ३म् अग्नये स्वाहा । इदमग्नये—इदं न मम । उत्तर दिशा में

ओ३म् सोमाय स्वाहा । इदं सोमाय इदं न मम । दक्षिण दिशा में

आज्यभागाहुति मन्त्र

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये—इदं न मम ।

ओ३म् इन्द्राय स्वाहा । इदं इन्द्राय—इदं न मम ।

व्याहृति आहुति मन्त्र

ओ३म् भूरग्नये स्वाहा । इदमग्नये—इदं न मम ।

ओ३म् भुवर्वायवे स्वाहा । इदं वायवे—इदं न मम ।

ओ३म् स्वरादित्याय स्वाहा । इदमादित्याय—इदं न मम ।

ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा । इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः—इदं न मम ।

स्विष्टकृत् आहुति मन्त्र

ओ३म् यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम् । अग्निष्टत् स्विष्टकृत् विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा । इदमग्नये स्विष्टकृते—इदं न मम ।

प्राजापत्याहुति मन्त्र

निम्नांकित मन्त्र को मन से ही उच्चारण कर आहुति दें—

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये इदं न मम ।

आज्याहुति मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः । आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय-इदन्न मम ।

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । अग्निर्ऋषिःपवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः. तमीमहे महागयं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय-इदन्न मम ।

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् । दधद् रयिं मयि पोषं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय-इदन्न मम ।

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् स्वाहा । इदं प्रजापतये-इदन्न मम ।

अष्ट आज्याहुति मन्त्र

ओ३म् त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान्. देवस्य हेळोऽअव यासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा । इदमग्नीवरुणाभ्यां–इदन्न मम ।

ओ३म् स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती. नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ । अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा । इदमग्नीवरुणाभ्यां–इदन्न मम ।

ओ३म् इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय । त्वामवस्युरा चके स्वाहा । इदं वरुणाय—इदन्न मम ।

ओ३म् तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस् तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्र मोषीः स्वाहा । इदं वरुणाय—इदन्न मम ।

ओ३म् ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा । इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः इदन्न मम ।

ओ३म् अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयासि । अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा । इदमग्नये अयसे—इदन्न मम ।

ओ३म् उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय । अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा । इदं वरुणायादित्यायादितये च—इदन्न मम ।

ओ३म् भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ । मा यज्ञꣳ हिꣳसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा । इदं जातवेदोभ्याम्—इदन्न मम ।

दैनिक अग्निहोत्र

इसमें केवल ५ मिनट समय लगता है

प्रातःकाल आहुति के मन्त्र

ओ३म् सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ।

ओ३म् सूर्यो वर्चो ज्योतिर् वर्चः स्वाहा ।

ओ३म् ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ।

ओ३म् सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या ।

जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ।

सायंकाल आहुति के मन्त्र

ओ३म् अग्निर्ज्योतिर् ज्योतिरग्निः स्वाहा ।

ओ३म् अग्निर्वर्चो ज्योतिर् वर्चः स्वाहा ।

ओ३म् अग्निर्ज्योतिर् ज्योतिरग्निः स्वाहा ।

ओ३म् सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या ।

जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ।

वैदिक ब्रह्म ज्योतिर्महायज्ञ के लिए अब पृष्ठ संख्या २१ से ज्योतिर्मन्त्रों की आहुतियाँ दी जाएँ। तदनन्तर पुनः प्रातः सायं निम्न मन्त्रों से आहुति देनी चाहिएँ।

ओ३म् भूरग्नये प्राणाय स्वाहा । इदमग्नये प्राणाय–इदं न मम ।

ओ३म् भुववार्यवेऽपानाय स्वाहा । इदं वायवेऽपानाय–इदं न मम ।

ओ३म् स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा । इदमादित्याय व्यानाय—इदं न मम ।

ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा । इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः इदं न मम ।

ओ३म् । आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरो३म् स्वाहा ।

ओ३म् यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ।

ओ३म् विश्वानि देव सवितर् दुरितानि परासुव । यद् भद्रं तन्न आ सुव स्वाहा ।

ओ३म् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् । युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा ।

निम्न मन्त्र से तीन पूर्णाहुति दें ।

ओ३म् । सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ।

शान्ति पाठ

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर् विश्वे देवाः शान्तिर् ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।

ओ३म शान्तिः शान्तिः शान्तिः

अथ ब्रह्म-ज्योतिर्महायज्ञ

ऋतेन यावृतावृधावृतस्य ज्योतिषस्पती । ता मित्रा वरुणा हुवे ।

ऋ. १-२३-५ ।

न ये दिवः पृथिव्या अन्तमापुर्न मायाभिर्धनदां पर्यभूवन्
युजं वज्रं वृषभश्चक्र इन्द्रो निर्ज्योतिषा तमसो गा अदुक्षत् ।

ऋ. १-३३-१० ।

नि त्वामग्ने मनुर्दधे ज्योतिर्जनाय शश्वते ।
दीदेथ कण्व ऋतजात उक्षितो यं नमस्यन्ति कृष्टयः ।

ऋ. १-३६-१९ ।

या नः पीपरदश्विना ज्योतिष्मती तमस्तिरः ।
तामस्मे रासाथामिषम् ।

ऋ. १-४६-६ ।

विश्वमस्या नानाम चक्षसे जगज्ज्योतिष्कृणोति सूनरी । अप
द्वेषो मघोनी दुहिता दिव उषा उच्छदप स्रिधः । ऋ. १-४८-८ ।

तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य । विश्वमा भासि रोचनम् ।
उद्वयं तमसस्परि ज्योतिष्पश्यन्त उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् । ऋ १-५०-४. १० ।

स हि श्रवस्युः सदनानि कृत्रिमा क्ष्मया वृधान ओजसा
विनाशयन् । ज्योतींषि कृण्वन्नवृकाणि यज्यवेऽव सुक्रतुः
सर्तवा अपः सृजत् ।

ऋ. १-५५-६ ।

अस्मै भीमाय नमसा समध्वर उषो न शुभ्र आ भरा पनीयसे ।
यस्य धाम श्रवसे नामेन्द्रियं ज्योतिरकारि हरितो नायसे ।
ऋ. १-५७-३ ।

मूर्धा दिवो नाभिरग्निः पृथिव्या अथाभवदरती रोदस्योः ।
तं त्वा देवासोऽजनयन्त देवं वैश्वानर ज्योतिरिदार्याय ।
ऋ. १-५९-२ ।

शुक्रः शुशुक्वाँ उषो न जारः पप्रा समीची दिवो न ज्योतिः ।
परि प्रजातः क्रत्वा बभूथ भुवो देवानां पिता पुत्रः सन् ।
ऋ. १-६९-१ ।

गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमत्रिणम् ।
ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि । ऋ. १-८६-१० ।

त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वं गाः त्वमा
ततन्थोर्वन्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ । ऋ. १-९१-२२ ।

अधि पेशांसि वपते नृतूरिवापोर्णुते वक्ष उस्रेव बर्जहम् ।
ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती गावो न व्रजं व्यु१षा आवर्तमः ।

यावित्था श्लोकमा दिवो ज्योतिर्जनाय चक्रथुः । आ न ऊर्जं
वहतमश्विना युवम् । ऋ. १-९२-४. १७ ।

अग्नीषोमा चेति तद्वीर्यं वां यदमुष्णीतमवसं पणिं गाः ।
अवातिरतं बृसयस्य शेषोऽविन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यः ।
ऋ. १-९३-४ ।

तमप्सन्त शवस उत्सवेषु नरो नरमवसे तं धनाय ।
सो अन्धे चित्तमसि ज्योतिर्विदन्मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती ।
ऋ. १-१००-८ ।

इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरागाच्चित्रः प्रकेतो अजनिष्ट विभ्वा ।
यथा प्रसूता सवितुः सवायँ एवा रात्र्युषसे योनिमारैक् ।

उदीर्ध्वं जीवो असुर्न आगादप प्रागात्तम आ ज्योतिरेति ।
आरैक्पन्थां यातवे सूर्यायागन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ।
ऋ. १-११३-१. १६ ।

शतं मेषान्वृक्ये मामहानं तमः प्रणीतमशिवेन पित्रा ।
आक्षी ऋज्राश्वे अश्विनावधत्तं ज्योतिरन्धाय चक्रथुर्विचक्षे ।

यवं वृकेणाश्विना वपन्तेषं दुहन्ता मनुषाय दस्रा । अभि दस्युं
बकुरेणा धमन्तोरु ज्योतिश्चक्रथुरार्याय । ऋ. १-११७-१७. २१ ।

उषा उच्छन्ती समिधाने अग्ना उद्यन्त्सूर्य उर्विया ज्योतिरश्रेत् ।
देवो नो अत्र सविता न्वर्थं प्रासावीद् द्विपत्प्रचतुष्पादित्यै ।

एषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शि ज्योतिर्वसाना समना पुरस्तात् ।
ऋतस्य पन्थामन्वेति साधु प्रजानतीव न दिशो मिनाति ।
ऋ. १-१२४-१. ३ ।

ज्योतिष्मतीमदितिं धारयत्क्षितिं स्वर्वतीमा सचेते दिवेदिवे
जागृवांसा दिवेदिवे । ज्योतिष्मत्क्षत्रमाशाते आदित्या
दानुनस्पती । मित्रस्तयोर्वरुणो यातयज्जनोऽर्यमा यातयज्जनः ।

ऋ. १-१३६-३ ।

वेदिषदे प्रियधामाय सुद्युते धासिमिव प्र भरा योनिमग्नये ।
वस्त्रेणेव वासया मन्मना शुचिं ज्योतीरथं शुक्रवर्णं तमोहनम् ।

ऋ. १-१४०-१ ।

किमत्र दस्रा कृणुथः किमासाथे जनो यः कश्चिदहविर्महीयते ।
अति क्रमिष्टं जुरतं पणेरसुं ज्योतिर्विप्राय कृणुतं वचस्यवे ।

ऋ. १-१८२-३ ।

धिष्वा शवः शूर येन वृत्रमवाभिनद्दानुमौर्णवाभम् ।
अपावृणोर्ज्योतिरार्याय नि सव्यतः सादि दस्युरिन्द्र ।

ऋ. २-११-१८ ।

अधा यो विश्वा भुवनाभि मज्मनेशानकृत्प्रवया अभ्यवर्धत ।
आद्रोदसी ज्योतिषा वह्निरातनोत्सीव्यन्तमांसि दुधिता
समव्ययत् ।

ऋ. २-१७-४ ।

देवाश्चित्ते असुर्य प्रचेतसो बृहस्पते यज्ञियं भागमानशुः ।
उस्राइव सूर्यो ज्योतिषा महो विश्वेषामिज्जनिता ब्रह्मणामसि ।

आ विबाध्या परिरापस्तमांसि च ज्योतिष्मन्तं रथमृतस्य तिष्ठसि । बृहस्पते भीममममित्रदम्भनं रक्षोहणं गोत्रभिदं स्वर्विदम् ।
ऋ. २-२३-२. ३ ।

ते दशग्वाः प्रथमा यज्ञमूहिरे ते नो हिन्वन्तूषसो व्युष्टिषु । उषा न रामीररुणैरपोर्णुते महो ज्योतिषा शुचता गोअर्णसा ।
ऋ. २-३४-१२ ।

न दक्षिणा वि चिकिते न सव्या न प्राचीनमादित्या नोत पश्चा । पाक्या चिद्वसवो धीर्या चिद्युष्मानीतो अभयं ज्योतिरश्याम् ।
ऋ. २-२७-११ ।

अदिते मित्र वरुणोत मृळ यद्वो वयं चकृमा कच्चिदागः । उर्वश्यामभयं ज्योतिरिन्द्र मा नो दीर्घा अभि नशन्तमिस्राः ।
ऋ. २-२७-१४ ।

मा नो वधैर्वरुण ये त इष्टावेनः कृण्वन्तमसुर भ्रीणन्ति । मा ज्योतिषःप्रवसथानि गन्म वि षू मृधः शिश्रथो जीवसे नः ।
ऋ. २-२८-७ ।

प्र होत्रे पूर्व्यं वचोऽग्नये भरता बृहत् । विपां ज्योतींषि बिभ्रते न वेधसे ।
ऋ. ३-१०-५ ।

क्रत्वा दक्षस्य तरुषो विधर्मणि देवासो अग्निं जनयन्त चित्तिभिः । रुरुचानं भानुना ज्योतिषा महामत्यं न वाजं सनिष्यन्नुपब्रुवे ।
ऋ. ३-२-३ ।

त्रिभिः पवित्रैरपुपोद्ध्य१ र्कं हृदा मतिं ज्योतिरनु प्रजानन् ।
वर्षिष्ठं रत्नमकृत स्वधाभिरादिद् द्यावापृथिवी पर्यपश्यत् ।
ऋ. ३-२६-८ ।

महि ज्योतिर्निहितं वक्षणास्वामा पक्वं चरति बिभ्रती गौः ।
विश्वं स्वाद्म सम्भृतमुस्रियायां यत्सीमिन्द्रो अदधाद्भोजनाय ।
ऋ. ३-३०-१४ ।

अभि जैत्रीरसचन्त स्पृधानं महि ज्योतिस्तमसो निरजानन् ।
तं जानतीः प्रत्युदायन्नुषासः पतिर्गवामभवदेक इन्द्रः ।
ऋ. ३-३१-४ ।

इन्द्रः स्वर्षा जनयन्नहानि जिगायोशिग्भिः पृतना अभिष्टिः ।
प्रारोचयन्मनवे केतुमह्नामविन्दज्ज्योतिर्बृहते रणाय ।
ऋ. ३-३४-४ ।

ज्योतिर्वृणीत तमसो विजानन्नारे स्याम दुरितादभीके ।
इमा गिरः सोमपाः सोमवृद्ध जुषस्वेन्द्र पुरुतमस्य कारोः ।
ज्योतिर्यज्ञाय रोदसी अनु ष्यादारेस्याम दुरितस्य भूरेः ।
भूरि चिद्धि तुजतो मर्त्यस्य सुपारासोवसवो बर्हणावत् ।
ऋ. ३-३९-७. ८ ।

ते मर्मृजत ददृवांसो अद्रिं तदेषामन्ये अभितो वि वोचन् ।
पश्वयन्त्रासो अभि कारमर्चन्विदन्त ज्योतिश्चकृपन्त धीभिः ।
ऋ. ४-१-१४ ।

एभिर्नो अर्कैर्भवा नो अर्वाङ् स्व१र्ण ज्योतिः । अग्ने विश्वेभिः सुमना अनीकैः ।
ऋ. ४-१०-३ ।

प्रत्यग्निरुषसामग्रमख्यद्विभातीनां सुमना रत्नधेयम् ।
यातमश्विना सुकृतो दुरोणमुत्सूर्यो ज्योतिषा देव एति ।
ऋ. ४-१३-१ ।

आवहन्त्यरुणी ज्योतिषागान्मही चित्रा रश्मिभिश्चेकिताना ।
प्रबोधयन्ती सुविताय देव्यु१षा ईयते सुयुजा रथेन ।
ऋ. ४-१४-३ ।

स्व१र्यद्वेदि सुदृशीकमर्कैर्महि ज्योती रुरुचुर्यद्ध वस्तोः ।
अन्धा तमांसि दुधिता विचक्षे नृभ्यश्चकार नृतमो अभिष्टौ ।
ऋ. ४-१६-४ ।

को देवानामवो अद्या वृणीते क आदित्याँ अदितिं ज्योतिरीट्टे ।
कस्याश्विनाविन्द्रो अग्निः सुतस्यांशोः पिबन्ति मनसाविवेनम् ।
ऋ. ४-२५-३ ।

आ दधिक्राः शवसा पञ्च कृष्टीः सूर्य इव ज्योतिषापस्ततान ।
सहस्रसाः शतसा वाज्यर्वा पृणक्तु मध्वा समिमा वचांसि ।
ऋ. ४-३८-१० ।

इदमु त्यत्पुरुतमं पुरस्ताज्ज्योतिस्तमसो वयुनावदस्थात् ।
नूनं दिवो दुहितरो विभातीर्गातुं कृणवन्नुषसो जनाय ।
ऋ. ४-५१-१ ।

बृहस्पतिः प्रथमं जायमानो महो ज्योतिषः परमे व्योमन् ।
सप्तास्यस्तुविजातो रवेण वि सप्तरश्मिरधमत्तमांसि ।
ऋ. ४-५०-४ ।

आपप्रुषी विभावरि व्यावज्योतिषा तमः । उषो अनु
स्वधामव । ऋ. ४-५२-६ ।

वि ज्योतिषा बृहता भात्यग्निराविर्विश्वानि कृणुते महित्वा ।
प्रादेवीर्मायाः सहते दुरेवाः शिशीते शृङ्गे रक्षसे विनिक्षे ।
ऋ. ५-२-९ ।

अग्निर्जातो अरोचत घ्नन्दस्यूञ्ज्योतिषा तमः । अविन्दद् गा
अपः स्वः । ऋ. ५-१४-४ ।

उद्यत्सहः सहस आजनिष्ट देदिष्ट इन्द्र इन्द्रियाणि विश्वा ।
प्राचोदयत्सुदुघा वव्रे अन्तर्वि ज्योतिषा संववृत्वत्तमोऽवः ।
ऋ. ५-३१-३ ।

माया वां मित्रावरुणा दिवि श्रिता सूर्यो ज्योतिश्चरति
चित्रमायुधम् । तमभ्रेण वृष्टया गूहथो दिवि पर्जन्य द्रप्सा
मधुमन्त ईरते । ऋ. ५-६३-४ ।

एषा जनं दर्शता बोधयन्ती सुगान्पथः कृण्वती यात्यग्रे ।
बृहद्रथा बृहती विश्वमिन्वोषा ज्योतिर्यच्छत्यग्रे अह्नाम् ।
एषा शुभ्रा न तन्वो विदानोर्ध्वेव स्नाती दृशये नो अस्थात् ।
अप द्वेषो बाधमाना तमांस्युषा दिवो दुहिताज्योतिषागात् ।

व्यूर्ण्वती दाशुषे वार्याणि पुनर्ज्योतिर्युवतिः पूर्वथाकः ।
एषा प्रतीचीदुहिता दिवो नॄन्योषेव भद्रा नि रिणीतेअप्सः ।

ऋ. ५-८०-२. ५. ६ ।

अग्ने स क्षेषदृतपा ऋतेजा उरु ज्योतिर्नशते देवयुष्टे ।
यं त्वं मित्रेण वरुणः सजोषा देव पासि त्यजसा मर्तमंहः ।

ऋ. ६-३-१ ।

व्यस्तभ्नाद्रोदसी मित्रो अद्भुतोऽन्तर्वावदकृणोज्ज्योतिषा तमः ।
वि चर्मणीव धिषणे अवर्तयद्वैश्वानरो विश्वमधत्त वृष्ण्यम् ।

ऋ. ६-८-३ ।

अहश्च कृष्णमहरर्जुनं च वि वर्तेते रजसी वेद्याभिः ।
वैश्वानरो जायमानो न राजावातिरज्ज्योतिषाग्निस्तमांसि ।
अयं होता प्रथमः पश्यतेममिदं ज्योतिरमृतं मर्त्येषु ।
अयं स जज्ञे ध्रुव आ निषत्तोऽमर्त्यस्तन्वा३ वर्धमानः ।
वि मे कर्णा पतयतो वि चक्षुर्वी३दं ज्योतिर्हृदय आहितं यत् ।
वि मे मनश्चरति दूर आधीः किं स्विद्वक्ष्यामि किमु नू मनिष्ये ।

ऋ. ६-९-१. ४. ६ ।

अयमकृणोदुषसः सुपत्नीरयं सूर्ये अदधाज्ज्योतिरन्तः ।
अयं त्रिधातु दिवि रोचनेषु त्रितेषु विन्ददमृतं निगूळ्हम् ।

ऋ. ६-४४-२३ ।

उरुं नो लोकमनु नेषि विद्वान्त्स्वर्वज्ज्योतिरभयं स्वस्ति ।
ऋष्वा त इन्द्र स्थविरस्य बाहू उप स्थेयाम शरणा बृहन्ता ।
ऋ. ६-४७-८ ।

इन्द्रासोमा वासयथ उषासमुत्सूर्यं नयथो ज्योतिषा सह ।
उप द्यां स्कम्भथुः स्कम्भनेनाप्रथतं पृथिवीं मातरं वि ।
ऋ. ६-७२-२ ।

त्वे असुर्यं वसवो न्यृण्वन्क्रतुं हि ते मित्रमहो जुषन्त ।
त्वं दस्यूँरोकसो अग्न आज उरु ज्योतिर्जनयन्नार्याय ।
ऋ. ७-५-६ ।

इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन्पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ।
ऋ. ७-३२-२६ ।

त्रयः कृण्वन्ति भुवनेषु रेतस्तिस्रः प्रजा आर्या ज्योतिरग्राः ।
त्रयो घर्मास उषसं सचन्ते सर्वाँ इत्ताँ अनु विदुर्वसिष्ठाः ।
सूर्यस्येव वक्षथो ज्योतिरेषां समुद्रस्येव महिमा गभीरः ।
वातस्येव प्रजवो नान्येन स्तोमो वसिष्ठा अन्वेतवे वः ।
विद्युतो ज्योतिः परि सञ्जिहानं मित्रावरुणा यदपश्यतां त्वा ।
तत्ते जन्मोतैकं वसिष्ठागस्त्यो यत्त्वा विश आजभार ।
ऋ. ७-३३-७. ८. १० ।

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणा वश्विना शम् ।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ।

ऋ. ७–३५–४ ।

प्रति षीमग्निर्जरते समिद्धः प्रति विप्रासो मतिभिर्गृणन्तः ।
उषा याति ज्योतिषा बाधमाना विश्वा तमांसि दुरितापं देवी ।

ऋ. ७–७८–२ ।

उदु ज्योतिरमृतं विश्वजन्यं विश्वानरः सविता देवो अश्रेत् ।
क्रत्वा देवानामजनिष्ट चक्षुराविरकर्भुवनं विश्वमुषाः ।

त इद्देवानां सधमाद आसन्नृतावानः कवयः पूर्व्यासः ।
गूळ्हं ज्योतिः पितरो अन्वविन्दन्त्सत्यमन्त्रा अजनयन्नुषासम् ।

ऋ. ७–७६–१. ४ ।

उपो रुरुचे युवतिर्न योषा विश्वं जीवं प्रसुवन्ती चरायै ।
अभूदग्निः समिधे मानुषाणामकर्ज्योतिर्बाधमाना तमांसि ।

ऋ. ७–७७–१ ।

एता उ त्याः प्रत्यदृश्रन् पुरस्ताज्ज्योतिर्यच्छन्ती रुषसो विभातीः ।
अजीजनन्त्सूर्यं यज्ञमग्निमपाचीनं तमो अगादजुष्टम् ।

प्रति केतवः प्रथमा अदृश्रन्नूर्ध्वा अस्या अञ्जयो वि श्रयन्ते ।
उषो अर्वाचा बृहता रथेन ज्योतिष्मता वाममस्मभ्यं वक्षि ।

ऋ. ७–७८–३. १ ।

व्यञ्जते दिवो अन्तेष्वक्तून्विशो न युक्ता उषसो यतन्ते ।
सं ते गावस्तम आ वर्तयन्ति ज्योतिर्यच्छन्ति सवितेव बाहू ।
ऋ. ७-७९-२ ।

एषा स्या नव्यमायुर्दधाना गूढ्वी तमो ज्योतिषोषा अबोधि ।
अग्र एति युवतिरह्रयाणा प्राचिकितत्सूर्यं यज्ञमग्निम् ।
ऋ. ७-८०-२ ।

प्रत्यु अदर्श्यायत्यु१च्छन्ती दुहिता दिवः ।
अपो महि व्ययति चक्षसे तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी ।
ऋ. ७-८१-१ ।

अस्मे इन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा द्युम्नं यच्छन्तु महि शर्म सप्रथः ।
अवध्रं ज्योतिरदितेर्ऋतावृधो देवस्य श्लोकं सवितुर्मनामहे ।
ऋ. ७-८२-१० ।

उच्छन्नुषसः सुदिना अरिप्रा उरु ज्योतिर्विविदुर्दीध्यानाः ।
गव्यं चिदूर्वमुशिजो वि वव्रुस्तेषामनु प्रदिवः सस्रुरापः ।
ऋ. ७-९०-४ ।

तिस्रो वाचः प्र वद ज्योतिरग्रा या एतद्दुह्रे मधुदोघ मूधः ।
स वत्संकृण्वन् गर्भमोषधीनां सद्यो जातो वृषभो रोरवीति ।
यो वर्धन ओषधीनां यो अपां यो विश्वस्य जगतो देव ईशे ।
स त्रिधातु शरणं शर्म यंसत्त्रिवर्तु ज्योतिः स्वभिष्ट्य१स्मे ।
ऋ. ७-१०१-१. २ ।

आदित्प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिष्पश्यन्ति वासरम् ।
परो यदिध्यते दिवा । ऋ. ८-६-३०।

यदा सूर्यममुं दिवि शुक्रं ज्योतिरधारयः ।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे । ऋ. ८-१२-३०।

येन ज्योतींष्यायवे मनवे च विवेदिथ ।
मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि । ऋ. ८-१५-५।

प्रणेतारं वस्यो अच्छा कर्तारं ज्योतिः समत्सु ।
सासह्वांसं युधामित्रान् । ऋ. ८-१६-१०।

यस्यामितानि वीर्या३ न राधः पर्येतवे ।
ज्योतिर्न विश्वमभ्यस्ति दक्षिणा । ऋ. ८-२४-२१।

उदु ष्य शरणे दिवो ज्योतिरयंस्त सूर्यः ।
अग्निर्न शुक्रः समिधान आहुतः । ऋ. ८-२५-१९।

उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते ।
तव ज्योतींष्यर्चयः । ऋ. ८-४४-१७।

अपाम सोमममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान् ।
किं नूनमस्मान्कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृतमर्त्यस्य ।
ऋ. ८-४८-३।

ज्योतिष्मन्तं केतुमन्तं त्रिचक्रं सुखं रथं सुषदं भूरिवारम् ।
चित्रामघा यस्य योगेऽधिजज्ञे तं वां हुवे अति रिक्तं पिबध्यै ।
ऋ. ८-५८-३ ।

सत्यमिद्वा उ तं वयमिन्द्रं स्तवाम नानृतम् ।
महाँ असुन्वतो वधो भूरि ज्योतींषि सुन्वतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।
ऋ. ८-६२-१२ ।

अरुणप्सुरुषा अभूदकर्ज्योतिर्ऋतावरी ।
अन्ति षद् भूतु वामवः । ऋ. ८-७३-१६ ।

बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् ।
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ।
ऋ. ८-८९-१ ।

विभाजञ्ज्योतिषा स्व१रगच्छो रोचनं दिवः ।
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे । ऋ. ८-९८-३ ।

बट् सूर्य श्रवसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि ।
मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ।
ऋ. ८-१०१-१२ ।

सना ज्योतिः सना स्व१र्विश्वा च सोम सौभगा ।
अथा नो वस्यसस्कृधि । ऋ. ९-४-२ ।

सप्ति मृजन्ति वेधसो गृणन्तः कारवो गिरा ।
ज्योतिर्जज्ञानमुक्थ्यम् । ऋ. ९-२९-२ ।

आ नः पवस्व धारया पवमान रयिं पृथुम् ।
यया ज्योतिर्विदासि नः ।
ऋ. ९–३५–१ ।

स नो ज्योतींषि पूर्व्य पवमान वि रोचय ।
क्रत्वे दक्षाय नो हिनु ।
ऋ. ९–३६–३ ।

पवमानो अजीजनद्दिवश्चित्रम् न तन्यतुम् ।
ज्योतिर्वैश्वानरं बृहत् ।
पवमान रसस्तव दक्षो वि राजति द्युमान् ।
ज्योतिर्विश्वं स्वर्दृशे ।
ऋ. ९–६१–१६. १८ ।
पवमान ऋतं बृहच्छुक्रं ज्योतिरजीजनत् ।
कृष्णा तमांसि जङ्घनत् ।
ऋ. ९–६६–२४ ।

ज्योतिर्यज्ञस्य पवते मधुप्रियं पिता देवानां जनिता विभूवसुः ।
दधाति रत्नं स्वधयोरपीच्यं मदिन्तमो मत्सर इन्द्रियो रसः ।

त्वं समुद्रो असि विश्ववित्कवे तवेमाः पञ्चप्रदिशो विधर्मणि ।
त्वं द्यां च पृथिवीं चाति जभ्रिषे तव ज्योतींषि पवमान सूर्यः ।

अग्रेगो राजाप्यस्तविष्यते विमानो अह्नां भुवनेष्वर्पितः ।
हरिर्घृतस्नुः सुदृशीको अर्णवो ज्योतीरथः पवते राय ओक्यः ।
ऋ. ९–८६–४५. १०. २९ ।

एवा पुनानो अपः स्व१र्गा अस्मभ्यं तोका तनयानि भूरि ।
शं नः क्षेत्रमुरु ज्योतींषि सोम ज्योङ्नः सूर्यं दृशये रिरीहि ।
ऋ. ९-९१-६ ।

तन्नु सत्यं पवमानस्यास्तु यत्र विश्वे कारवः संनसन्त ।
ज्योतिर्यदह्ने अकृणोदु लोकं प्रावन्मनुं दस्यवे करभीकम् ।
ऋ. ९-९२-५ ।

इषमूर्जमभ्य१र्षाश्वं गामुरु ज्योतिः कृणुहि मत्सि देवान् ।
विश्वानि हि सुषहा तानि तुभ्यं पवमान बाधसे सोम शत्रून् ।
ऋ. ९-९४-५ ।

स वर्धिता वर्धनः पूयमानः सोमो मीढ्वाँ अभि नो ज्योतिषावीत् ।
येना नः पूर्वे पितरः पदज्ञाः स्वर्विदो अभि गा अद्रिमुष्णन् ।
महत्तत्सोमो महिषश्चकारापां यद्गर्भोऽवृणीत देवान् ।
अदधादिन्द्रे पवमान ओजोऽजनयत्सूर्ये ज्योतिरिन्दुः ।
ऋ. ९-९७-३९. ४१ ।

अपो वसानः परि कोशमर्षतीन्दुर्हियानः सोतृभिः ।
जनयञ्ज्योतिर्मन्दना अवीवशद्गाः कृण्वानो न निर्णिजम् ।
ऋ. ९-१०७-२६ ।

वृषा वि जज्ञे जनयन्नमर्त्यः प्रतपञ्ज्योतिषा तमः ।
स सुष्टुतः कविभिर्निर्णिजं दधे त्रिधात्वस्य दंससा ।
ऋ. ९-१०८-१२ ।

यत्र ज्योतिरजस्रं यस्मिँल्लोके स्वर्हितम् ।
तस्मिन्मां धेहि पवमानामृते लोके अक्षित इन्द्रायेन्दो परिस्रव ।

यत्रानुकामं चरणं त्रिनाके त्रिदिवे दिवः लोका यत्र ।
ज्योतिष्मन्तस्तत्र मामममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परिस्रव ।

ऋ. ९-११३-७. ९ ।

अग्ने बृहन्नुषसामूर्ध्वो अस्थान्निर्जगन्वान्तमसो ज्योतिषागात् ।
अग्नि भानुना रुशता स्वङ्ग आ जातो विश्वासद्मान्यप्राः ।

ऋ. १०-१-१ ।

यस्मिन्देवा विदथे मादयन्ते विवस्वतः सदने धारयन्ते ।
सूर्ये ज्योतिरदधुर्मास्य१क्तून्परि द्योतनिं चरतो अजस्रा ।

ऋ. १०-१२-७ ।

अबुध्रमु त्य इन्द्रवन्तो अग्नयो ज्योतिर्भरन्त उषसो व्युष्टिषु ।
महीद्यावापृथिवी चेततामपोऽद्या देवानामव आ वृणीमहे ।

ऋ. १०-३५-१ ।

प्र याः सिस्रते सूर्यस्य रश्मिभिर्ज्योतिर्भरन्तीरुषसो व्युष्टिषु ।
भद्रा नो अद्य श्रवसे व्युच्छत स्वस्त्य१ग्निं समिधानमीमहे ।

अनमीवा उषस आ चरन्तु न उदग्नयो जिहतां ज्योतिषा बृहत् ।
आयुक्षातामश्विना तूतुजिं रथं स्वस्त्य१ग्निं समिधानमीमहे ।

ऋ. १०-३५-५. ६ ।

विश्वस्मान्नो अदितिः पात्वंहसो माता मित्रस्य वरुणस्य रेवतः ।
स्वर्वज्ज्योतिरवृकं नशीमहि तद्देवनामवो अद्या वृणीमहे ।
ऋ. १०-३६-३ ।

न ते अदेवः प्रदिवो नि वासते यदेतशेभिः पतरै रथर्यसि ।
प्राचीनमन्यदनु वर्तते रज उदन्येन ज्योतिषा यासि सूर्य ।
महि ज्योति बिभ्रतं त्वा विचक्षण भास्वन्तं चक्षुषे चक्षुषे मयः ।
आरोहन्तं बृहतः पाजसस्परि वयं जीवाः प्रति पश्येम सूर्य ।
येन सूर्य ज्योतिषा बाधसे तमो जगच्च विश्वमुदियर्षि भानुना ।
तेनास्मद्विश्वामनिरामनाहुतिमपामीवामप दुःष्वप्न्यं सुव ।
ऋ. १०-३७-३. ८. ४ ।

वयो न वृक्षं सुपलाशमासदन्त्सोमास इन्द्रं मन्दिनश्चमूषदः ।
प्रैषामनीकं शवसा दविद्युतद्विदत्स्व१र्मनवे ज्योतिरार्यम् ।
वृषा न क्रुद्धः पतयद्रजः स्वा यो अर्यपत्नीरकृणोदिमा अपः ।
स सुन्वते मघवा जीरदानवेऽविन्दज्ज्योतिर्मनवे हविष्मते ।
उज्जायतां परशुर्ज्योतिषा सह भूया ऋतस्य सुदुघा पुराणवत् ।
वि रोचतामरुषो भानुना शुचिः स्व१र्ण शुक्रं शुशुचीत सत्पतिः ।
ऋ. १०-४३-४. ८. ६ ।

तन्तुं तन्वन्रजसो भानुमन्विहि ज्योतिष्मतः पथो रक्ष धिया कृतान् । अनुल्वणं वयत जोगुवामपो मनुर्भव जनया दैव्यं जनम् ।
ऋ. १०-५३-६ ।

यो अद्धाज्ज्योतिषि ज्योतिरन्तर्यो असृजन्मधुना संमधूनि ।
अधप्रियं शूषमिन्द्राय मन्म ब्रह्मकृतो बृहदुक्थादवाचि ।
ऋ. १०-५४-६ ।

महत्तन्नाम गुह्यं पुरुस्पृग्येन भूतं जनयो येन भव्यम् ।
प्रत्नं जातं ज्योतिर्यदस्य प्रियं प्रियाः समविशन्त पञ्च ।

आ रोदसी अपृणादोत मध्यं पञ्च देवाँ ऋतुशः सप्तसप्त ।
चतुस्त्रिंशता पुरुधा वि चष्टे सरूपेण ज्योतिषा विव्रतेन ।
ऋ. १०-५५-२. ३ ।

इदं त एकं पर ऊ त एकं तृतीयेन ज्योतिषा सं विशस्व ।
संवेशने तन्व१श्चारुरेधि प्रियो देवानां परमे जनित्रे ।
तनूष्टे वाजिन्तन्वं१नयन्ती वाममस्मभ्यं धातुशर्म तुभ्यम् ।
अह्रुतो महो धरुणाय देवान्दिवीव ज्योतिःस्वमा मिमीयाः ।
ऋ. १०-५६-१. २ ।

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः ।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवोवर्ष्माणं वसते स्वस्तये ।
ऋ. १०-६३-४ ।

देवान्हुवे बृहच्छ्रवसःस्वस्तये ज्योतिष्कृतो अध्वरस्य प्रचेतसः ।
ये वावृधुः प्रतरं विश्ववेदस इन्द्रज्येष्ठासो अमृता ऋतावृधः ।

इन्द्रं प्रसूता वरुण प्रशिष्टा ये सूर्यस्य ज्योतिषो भागमानशुः ।
मरुद्गणे वृजने मन्म धीमहि माघोने यज्ञं जनयन्त सूरयः ।
ऋ. १०-६६-१, २ ।

अवो द्वाभ्यां पर एकया गा गुहा तिष्ठन्तीरनृतस्य सेतौ ।
बृहस्पतिस्तमसि ज्योतिरिच्छन्नुदुस्रा आकर्विहि तिस्र आवः ।
यदा वाजमसनद्विश्वरूपमा द्यामरुक्षदुत्तराणि सद्म ।
बृहस्पतिं वृषणं वर्धयन्तो नाना सन्तो बिभ्रतो ज्योतिरासा ।
ऋ. १०-६७-४. १० ।

अप ज्योतिषा तमो अन्तरिक्षादुद्नः शीपालमिव वात आजत् ।
बृहस्पतिरनुमृश्या वलस्याभ्रमिव वात आ चक्र आ गाः ।
अभि श्यावं न कृशनेभिरश्वं नक्षत्रेभिः पितरो द्यामपिंशन् ।
रात्र्यां तमो अदधुर्ज्योतिरहन्बृहस्पतिर्भिनदद्रिं विदद्गाः ।
ऋ. १०-६८-५. ११ ।

तदग्ने चक्षुः प्रति धेहि रेभे शफारुजं येन पश्यसि यातुधानम् ।
अथर्वज्ज्योतिषा दैव्येन सत्यं धूर्वन्तमचितं न्योष ।
ऋ. १०-८७-१२ ।

यूयं धूर्षु प्रयुजो न रश्मिभिर्ज्योतिष्मन्तो न भासा व्युष्टिषु ।
श्येनासो न स्वयशसो रिशादसः प्रवासो न प्रसितासः परिप्रुषः ।
ऋ. १०-७७-५ ।

आविरभून्महि माघोनमेषां विश्वं जीवं तमसो निरमोचि ।
महि ज्योतिः पितृभिर्दत्तमागा दुरुः पन्था दक्षिणाया अदर्शि ।

ऋ. १०–१०७–१ ।

दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचा मिमाना यज्ञं मनुषो यजध्यै ।
प्रचोदयन्ता विदथेषु कारु प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता ।

ऋ. १०–११०–७ ।

अयं वेनश्चोदयत्पृश्निगर्भा ज्योतिर्जरायू रजसो विमाने ।
इममपां संङ्गमे सूर्यस्य शिशुं न विप्रामतिभी रिहन्ति ।

ऋ. १०–१२३–१ ।

ओर्वप्रा अमर्त्या निवतो देव्यु१द्वतः । ज्योतिषा बाधते तमः ।

ऋ. १०–१२७–२ ।

केश्य१ग्निं केशी विषं केशी बिभर्ति रोदसी ।
केशी विश्वं स्वर्दृशे केशीदं ज्योतिरुच्यते ।

ऋ. १०–१३६–१ ।

सूर्य रश्मिर्हरिकेशः पुरस्तात्सविता ज्योतिरुदयाँ अजस्रम् ।
तस्य पूषा प्रसवे याति विद्वान्त्सम्पश्यन्विश्वा भुवनानि गोपाः ।

ऋ. १०–१३९–१ ।

अग्ने नक्षत्रमजरमा सूर्यंरोहयो दिवि । दधज्ज्योतिर्जनेभ्यः ।

ऋ. १०–१५६–४ ।

विभ्राड् बृहत्सुभृतं वाजसातमं धर्मन्दिवो धरुणे सत्यमर्पितम्।
अमित्रहा वृत्रहा दस्युहन्तमं ज्योतिर्जज्ञे असुरहासपत्नहा।

ऋ. १०–१७०–२।

सद्यश्चिद्यः शवसा पञ्चकृष्टीः सूर्यइव ज्योतिषापस्ततान।
सहस्रसाः शतसा अस्यरंहिर्न स्मा वरन्ते युवतिं न शर्याम्।

ऋ. १०–१७८–३।

यस्मै पुत्रासो अदितेः प्र जीवसे मर्त्याय। ज्योतिर्यच्छन्त्यजस्रम्।

ऋ. १०–१८५–३।

अग्ने वेर्होत्रं वेर्दूत्यमवतां त्वां द्यावापृथिवीऽअव त्वं द्यावापृथिवी। स्विष्टकृद्देवेभ्यऽइन्द्रऽआज्येन हविषा भूत्स्वाहा सं ज्योतिषा ज्योतिः।

यजु. २–९।

दिवि विष्णुर्व्यक्रँस्त जागतेन च्छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मोऽन्तरिक्षे विष्णुर्व्यक्रँस्त त्रैष्टुभेन च्छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः पृथिव्यां विष्णुर्व्यक्रँस्त गायत्रेण च्छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मोऽस्मादन्नादस्यै प्रतिष्ठायाऽअगन्म स्वः सं ज्योतिषा भूम।

यजु. २–२५।

अग्निर्ज्योति ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योति ज्योतिः सूर्यः स्वाहा । अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा । ज्योतिः सूर्यः सूर्य्यो ज्योतिः स्वाहा ।

यजु. ३–९ ।

ते हि पुत्रासोऽअदितेः प्र जीवसे मर्त्याय । ज्योतिर्यच्छन्त्यजस्रम् ।

यजु. ३–३३ ।

ज्योतिरसि विश्वरूपं विश्वेषां देवानाᳫं समित् त्वं सोम तनूकृद्भ्यो द्वेषोभ्योऽन्यकृतेभ्यऽउरु यन्तासि वरूथᳫं स्वाहा । जुषाणोऽअप्तु राज्यस्य वेतु स्वाहा । यजु. ५–३५ ।

यत्ते सोम दिवि ज्योति र्यत् पृथिव्यां यदुरावन्तरिक्षे । तेनास्मै यजमानायोरु राये कृद्ध्यधि दात्रे वोचः ।

यजु. ६–३३ ।

अयं वेनश्चोदयत् पृश्निगर्भा ज्योतिर्जरायू रजसो विमाने । इममपाᳫं सङ्गमे सूर्य्यस्य शिशुं न विप्रामतिभी रिहन्ति । उपयाम गृहीतोऽसि मर्काय त्वा । यजु. ७–१६ ।

यस्मान्न जातः परोऽअन्यो अस्तियऽआविवेश भुवनानि विश्वा । प्रजापतिः प्रजया सᳫंरराणस्त्रीणि ज्योतीᳫंषि सचते स षोडशी ।

इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिते सरस्वति महि विश्रुति।
एता ते ऽ अघ्न्ये नामानि देवेभ्यो मा सुकृतं ब्रूतात्।

सत्रस्य ऽ ऋद्धिरस्यगन्म ज्योतिरमृताऽअभूम।
दिवं पृथिव्याऽ अध्यारुहामाविदाम देवान्त्स्व ज्योतिः।

यजु. ८-३६. ४३-५२।

युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्वाय सविता धियः।
अग्ने ज्योति निचाय्य पृथिव्याऽअध्याभरत्।

युक्त्वाय सविता देवान्त्स्वर्य्यतो धिया दिवम्।
बृहज्ज्योतिः करिष्यतः सविता प्रसुवाति तान्।

हस्त आधाय सविता बिभ्रदभ्रिꣳ हिरण्ययीम्। अग्नेर्ज्योति निचाय्य पृथिव्याऽ अध्याभरदानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वत्।

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
पृथिव्याः सधस्थादग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वत् खनामि।
ज्योतिष्मन्तं त्वाग्ने सुप्रतीकमजस्रेण भानुना दीद्यतम्। शिवं प्रजाभ्योऽहिꣳसन्तं पृथिव्याः सधस्थादग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वत् खनामः।

संवसाथा स्वर्विदा समीचीऽउरसा त्मना।
अग्निमन्तर्भरिष्यन्ती ज्योतिष्मन्तमजस्रमित्

सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमा सदत्स्वः ।
वासोऽअग्ने विश्वरूपꣳ संव्ययस्व विभावसो ।

रुद्राः सꣳसृज्य पृथिवीं बृहज्ज्योतिः समीधिरे ।
तेषां भानुरजस्रऽइच्छुक्र देवेषु रोचते ।

मित्रः सꣳसृज्य पृथिवीं भूमिं च ज्योतिषा सह ।
सुजातं जातवेदसमयक्ष्माय त्वा सꣳसृजामि प्रजाभ्यः ।

यजु. ११-१. ३. ११. २८. ३१. ४०. ५४. ५३ ।

अग्ने बृहन्नुषसामूर्ध्वोऽअस्थान्निर्जगन्वान् तमसो ज्योतिषागात् ।
अग्नि र्भानुना रुशता स्वङ्गऽ आ जातो विश्वा सद्मान्य प्राः ।

विमुच्यध्वमघ्न्या देवयानाऽअगन्म तमसस्पारमस्य ।
ज्योतिरापाम ।

प्रेदग्ने ज्योतिष्मान् याहि शिवेभिरर्चिभिष्ट्वम् ।
बृहद्भिर्भानुभिर्भासन् मा हिंसी स्तन्वा प्रजाः ।
प्रसद्य भस्मना योनिमपश्च पृथिवीमग्ने ।
सꣳसृज्य मातृभिष्ट्वं ज्योतिष्मान् पुनरासदः ।

यजु. १२-१३. ७३. ३२. ३८ ।

विराड् ज्योतिरधारयत् स्वराड् ज्योतिरधारयत् ।
प्रजापतिष्ट्वा सादयतु पृष्ठे पृथिव्या ज्योतिष्मतीम् ।

विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ ।
अग्निष्टेऽधिपतिस्तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ।
ऋचे त्वा रुचे त्वा भासे त्वा ज्योतिषे त्वा ।
अभूदिदं विश्वस्य भुवनस्य वाजिनमग्ने वैश्वानरस्य च ।
अग्निर्ज्योतिषाज्योतिष्मान् रुक्मो वर्चसा वर्चस्वान् ।
सहस्रदाऽअसि सहस्राय त्वा ।
अपां त्वेमन्त्सादयाम्यपां त्वोद्मन्त्सादयाम्यपां त्वा भस्मन्त्सादयाम्यपां त्वा ज्योतिषि सादयाम्यपां त्वायने सादयाम्यर्णवे त्वा सदने सादयामि समुद्रे त्वा सदने सादयामि । सरिरे त्वा सदने सादयाम्यपां त्वा क्षये सादयाम्यपां त्वा सधिषि सादयाम्यपां त्वा सदने सादयाम्यपां त्वा सधस्थे सादयाम्यपां त्वा योनौ सादयाम्यपां त्वा पुरीषे सादयाम्यपां त्वा पाथसि सादयामि गायत्रेण त्वा छन्दसा सादयामि त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा सादयामि जागतेन त्वा छन्दसा सादयाम्यानुष्टुभेन त्वा छन्दसा सादयामि पाङ्क्तेन त्वा छन्दसा सादयामि ।

यजु. १३-२४. ३९. ४०. ५३ ।

विश्वकर्मा त्वा सादयत्वन्तरिक्षस्य पृष्ठे ज्योतिष्मतीम् ।
विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ ।
वायुष्टेऽधिपतिस्तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ।

आयुर्मे पाहि प्राणं मे पाह्यपानं मे पाहि व्यानं मे पाहि चक्षुर्मे पाहि श्रोत्रं मे पाहि वाचम्मे पिन्व मनो मे जिन्वात्मानम्मे पाहि ज्योतिर्मे यच्छ ।

यजु. १४-१४. १७ ।

एभिर्नोऽअर्कैर्भवा नो अर्वाङ् स्वर्ण ज्योतिः ।
अग्ने विश्वेभिः सुमनाऽअनीकैः ।

परमेष्ठी त्वा सादयतु दिवस्पृष्ठे ज्योतिष्मतीम् ।
विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ ।
सूर्यस्तेऽधिपतिस्तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ।

यजु. १५-४६. ५८ ।

सूर्य रश्मि हरिकेशः पुरस्तात्सविताज्योतिरुदया २ ऽ अजस्रम् ।
तस्य पूषा प्रसवे याति विद्वान्त्सम्पश्यन्विश्वा भुवनानि गोपाः ।

पृथिव्या अहमुदन्तरिक्षमारुहमन्तरिक्षाद्दिवमारुहम् ।
दिवो नाकस्य पृष्ठात् स्वर्ज्योतिरगामहम् ।

सुपर्णोऽसि गरुत्मान् पृष्ठे पृथिव्याः सीद । भासान्तरिक्षमापृण ज्योतिषा दिवमुत्तभान तेजसा दिश उद्दृंह ।

शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्मांश्च ।
शुक्रश्च ऋतपाश्चात्यंहाः । यजु १७-५८. ६७. ७२. ८० ।

वाजश्च मे प्रसवश्च मे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्च मे क्रतुश्च मे स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रवश्च मे श्रुतिश्च मे ज्योतिश्च मे स्वश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।

आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पताᳬ श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां वाग्यज्ञेन कल्पतां मनो यज्ञेन कल्पतामात्मा यज्ञेन कल्पतां ब्रह्मा यज्ञेन कल्पतां ज्योतिर्यज्ञेन कल्पताᳬ स्वर्यज्ञेन कल्पतां पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् । स्तोमश्च यजुश्च ऋक् च साम च बृहच्च रथन्तरञ्च । स्वर्देवाऽअगन्मामृताअभूम प्रजापतेः प्रजा अभूमवेट् स्वाहा ।

स्वर्ण घर्मः स्वाहा । स्वर्णार्कः स्वाहा । स्वर्णशुक्रः स्वाहा । स्वर्ण ज्योतिः स्वाहा । स्वर्ण सूर्यः स्वाहा ।

यजु. १८–१. २९. ५० ।

अङ्गान्यात्मन् भिषजा तदश्विनात्मानमङ्गैः समधात् सरस्वती । इन्द्रस्य रूपᳬ शतमानमायुश्चन्द्रेण ज्योतिरमृतं दधानाः ।

यजु. १९–९३ ।

उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ।

एधोऽस्येधिषीमहि समिदसि तेजोऽसि तेजो मयि धेहि ।

समावर्वर्ति पृथिवी समुषाः समु सूर्यः । समु विश्वमिदं जगत् ।
वैश्वानर ज्योति र्भूयासं विभून्कामान्व्यश्नवै भूः स्वाहा ।

बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् ।
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ।

दैव्या मिमाना मनुषः पुरुत्रा होताराविन्द्रं प्रथमा सुवाचा ।
मूर्द्धन्यज्ञस्य मधुना दधाना प्राचीनं ज्योतिर्हविषा वृधातः ।

यजु. २०–२१. २३. ३०. ४२ ।

होता यक्षद्दुरो दिशः कवष्यो न व्यचस्वतीरश्विभ्यां न दुरो दिश इन्द्रो न रोदसी दुघे दुहे धेनुः सरस्वत्यश्विनेन्द्राय भेषजꣳ शुक्रं न ज्योतिरिन्द्रियं पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज ।

देवीऽ ऊर्जाहुती दुघे सुदुघेन्द्रे सरस्वत्यश्विना भिषजावतः । शुक्रं न ज्योति स्तनयोराहुती धन्त इन्द्रियं वसुवनै वसुधेयस्य व्यन्तु यज ।

यजु. २१–३४. ५२ ।

असवे स्वाहा वसवे स्वाहा विभुवे स्वाहा विवस्वते स्वाहा गणश्रिये स्वाहा गणपतये स्वाहाभिभुवे स्वाहाधिपतये स्वाहा शूषाय स्वाहा सꣳ सर्पाय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा ज्योतिषे स्वाहा मलिम्लुचाय स्वाहा दिवा पतये स्वाहा ।

आयुर्यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा प्राणो यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा-
पानो यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा व्यानो यज्ञेन कल्पताᳫ
स्वाहोदानो यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा समानो यज्ञेन कल्पताᳫ
स्वाहा चक्षुर्यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा श्रोत्रं यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा
वाग्यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा मनो यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहात्मा
यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा ब्रह्मा यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा
ज्योतिर्यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा स्वर्यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा पृष्ठं
यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा यज्ञो यज्ञेन कल्पताᳫ स्वाहा ।

यजु. २२–३०. ३३ ।

किᳫ स्वित्सूर्यसमं ज्योतिः किᳫ समुद्रसमᳫ सरः ।
किᳫ स्वित्पृथिव्यै वर्षीयः कस्य मात्रा न विद्यते ।
ब्रह्म सूर्य समं ज्योतिर्द्यौः समुद्रसमं सरः ।
इन्द्रः पृथिव्यै वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते ।

यजु. २३–४७. ४८ ।

ऋतावानं वैश्वानरमृतस्य ज्योतिषस्पतिम् । अजस्रं घर्ममीमहे ।
उपयाम गृहीतोऽसि वैश्वानराय त्वैष ते योनि वैश्वानराय त्वा ।

यजु. २६–६ ।

उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् । यजु. २७–१० ।

प्रथमा वां सरथिना सुवर्णा देवौ पश्यन्तौ भुवनानि विश्वा ।
अपिंप्रयं चोदना वाँ मिमाना होतारा ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता ।
दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचा मिमाना यज्ञं मनुषो यजध्यै ।
प्रचोदयन्ता विदथेषु कारू प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता ।

यजु. २९-७. ३२ ।

यस्माज्जातं न पुरा किं चनैव य आबभूव भुवनानि विश्वा ।
प्रजापतिः प्रजया संरराणस्त्रीणि ज्योतींषि सचते स षोडशी ।

यजु. ३२-५ ।

तरणिं विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य्य ।
विश्वमा भासि रोचनम् ।
बट् सूर्य्य श्रवसा महाँऽअसि सत्रा देव महाँ ऽ असि ।
मह्ना देवानामसुर्य्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ।
दिविपृष्ठो ऽ अरोचताग्नि वैश्वानरो बृहन् ।
क्ष्मया वृधान ऽ ओजसा चनोहितो ज्योतिषा बाधते तमः ।

यजु. ३३-३६. ४०. ९२ ।

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।
यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्नऋते किं चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।

त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वं गाः ।
त्वमा ततन्थोर्वन्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ।
यजु. ३४–१. ३. २२।

उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् । यजु. ३५–१४।

अहः केतुना जुषताꣳ सुज्योति ज्योतिषा स्वाहा ।
रात्रिः केतुना जुषताꣳ सुज्योति ज्योतिषा स्वाहा ।
यजु. ३७–२१।

स्वाहा रुद्राय रुद्रहूतये स्वाहा सं ज्योतिषा ज्योतिः ।
अहः केतुना जुषताꣳ सुज्योति ज्योतिषा स्वाहा ।
रात्रिः केतुना जुषताꣳ सुज्योति ज्योतिषा स्वाहा ।
मधु हुतमिन्द्र तमे अग्नावश्याम ते देव घर्म नमस्तेऽ अस्तु मा मा हिꣳसीः ।
उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्तऽ उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ।
मयि त्यदिन्द्रियं बृहन्मयि दक्षो मयि क्रतुः । घर्मस्त्रिशुग्वि राजति विराजा ज्योतिषा सह ब्रह्मणा तेजसा सह ।
यजु. ३८–१६. २६. २७।

१र २र ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३
नि त्वामग्ने मनुर्दधे ज्योतिर्जनाय शश्वते दीदेथ ।
१ २ ३ १ २ ३ १र २र २ १ २ ३ १ २
कण्व ऋतजात उक्षितो यं नमस्यन्ति कृष्टयः ।

साम. पू. १-५-१० ।

२उ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २उ ३ १ २
आदित्प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिः पश्यन्ति वासरम् । परो यदिध्यते
३ २
दिवि । साम. पू. १-२-१० ।

२ १र २र ३ १ २ ३ १ २
बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् ।
२ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
येन ज्योतिर जनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ।

साम. पू. ३-२-६ ।

३ २र २र ३ १ २ ३ १र २र ३ २
महत्तत्सोमो महिषश्चकारापां यद्गर्भोऽवृणीतदेवान् ।
१ २ ३ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ २ ३ २ ३ १ २
अदधादिन्द्रे पवमान ओजो ऽ जनयत्सूर्ये ज्योतिरिन्दुः ।

साम. पू. ५-५-१० ।

१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
ज्योतिर्यज्ञस्य पवते मधुप्रियं पिता देवानाँ जनिता विभूवसुः ।
१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३क २र ३ १ २ ३ १ २ ३ १र २र
दधाति रत्नं स्वधयोरपीच्यं मदिन्तमो मत्सर इन्द्रियो रसः ।

३ १ २ ३ १ २ ३क २र ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २
अभिक्रन्दन् कलशं वाज्यर्षति पतिर्दिवः शतधारो विचक्षणः।
१ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
हरिर्मित्रस्य सदनेषु सीदति मर्मृजानोऽविभिः सिन्धुभिर्वृषा।
२ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १र २र
अग्रे सिन्धूनाँ पवमानो अर्षस्यग्रे वाचो अग्रियो गोषु गच्छसि।
२ ३ १ २ ३ १र २र ३ २ ३ १ २
अग्रे वाजस्य भजसे महद्धनं स्वायुधः सोतृभिः सोम सूयसे।

सा. उ. ४–१–१।

३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
इदं त एकं पर ऊत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व।
३ १ २ ३ २ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
सं वेशनस्तन्वे३ चारुरेधि प्रियो देवानां परमे जनित्रे।

सा. पू. १–२–३।

१र २र ३ २उ ३ १ २ ३ २
प्रहोत्रे पूर्व्यं वचोग्नये भरता बृहत्।
३ १र २र ३ २ ३ २ ३ १ २
विपां ज्योतींषि बिभ्रते न वेधसे।

सा. पू. २–१–२।

२ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
इन्द्र क्रतुं न आभर पिता पुत्रेभ्यो यथा।
१ २ २ १ २ ३ १ २ ३ १र २र
शिक्षाणो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि।

साम. पू. ३–२–७।

१ २ ३ २ १ २ ३ २ १ २
प्रत्यु अदर्शायत्यु३च्छन्ती दुहिता दिवः ।
१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २
अपोमही वृणुते चक्षुषा तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी ।
साम. पू. ४–२–१ ।

१ २ ३ २ ३ १र २र ३ २
पवमानो अजीजनत् दिवश्चित्रं न तन्यतुम् ।
१ २ ३ २ ३ २
ज्योति वैंश्वानरं बृहत् । साम. पू. ५–५–२ ।

३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २
अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा घृतम्मे चक्षुरमृतम्म आसन् ।
३ १ २ ३ १र २र ३ १र २र ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
त्रिधातुरर्को रजसो विमानोऽजस्रञ्ज्योति र्हविरस्मि सर्वम् ।
साम. पू. ६–३–१२ ।

३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ २ ३ १ २ ३ २
तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य । विश्वमाभासि रोचनम् ।
साम. पू. ६–५–६ ।

३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २उ ३ १ २ ३ २
अयं सहस्र मानवो दृशः कवीनां मातिर्ज्योतिर्विधर्म । ब्रध्नः
३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २
समीचोरुषसः स मैरयदरेपसः सचेतसः स्वसरे मन्युमन्तश्चिता
गोः । साम. पू. ५–३–२ ।

१ २ ३ २ १ २ ३ २ ३ २
प्रत्यु अदर्श्यायत्यू३च्छन्ती दुहिता दिवः ।
१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २
अपो महीवृणुते चक्षुषातमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी ।
२ ३ १ ३ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ २
उदुस्रियाः सृजते सूर्यः सचा उद्यन् नक्षत्रमर्चिवत् ।
१र २र ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
तवेदुषो व्युषि सूर्यस्य च संभक्त्तेन गमेमहि ।

साम. उ. १-१४-१।

३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ २ ३ २ ३ १ २
मित्रं वयं हवामहे वरुणं सोम पीतये । या जाता पूतदक्षसा ।
३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ २ ३ १र २र
ऋतेन या वृता वृधा वृतस्य ज्योतिषस्पती । ता मित्रा वरुणा हुवे ।
१ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ १ २ १ २ ३ १ २
वरुणः प्रविता भुवनमित्रो विश्वाभिरूतिभिः । करतां नः सुराधसः ।

साम. उ. २-७-२।

२ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १
तं ते मदं गृणीमसि वृषणं पृत्सु सासहिम् । उ लोक कृत्नु
२ ३ १ २ ३ २ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २
मद्रिवो हरिश्रियम् । येन ज्योतींष्यायवे मनवे च विवेदिथ ।
३ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ २ ३ १ २ ३ १र २र
मन्दानो अस्य बर्हिषो विराजसि । तदद्याचित्त उक्थिनोऽनु

३ १ २   १ २   ३ १ २   ३ १ २
ष्टुवन्ति पूर्वथा । वृषपत्नीरपो जया दिवेदिवे ।

सामं. पू. २–१८–२ ।

१ २   ३ २ ३ १र २र३ २   १ २   ३ २ ३ २
पवमानो अजीजनद्दिवश्चित्रन्न तन्यतुम् । ज्योतिर्वैश्वानरं बृहत् ।
१ २ ३ २ ३ २ ३   १ २   ३ २   २उ   ३ १ २
पवमान रसस्तव मदो राजन्नदुच्छुनः । वि वारमव्यमर्षति ।
१ २   ३ २ ३ २ ३ १ २   ३ २   २ ३ २ ३क २र३ २
पवमानस्य ते रसो दक्षो विराजति द्युमान् । ज्योतिर्विश्वं स्वर्दृशे ।

साम. उ. ३–२–३ ।

१ २ ३ १ २   ३ १ २   ३ २ ३ २   ३ १ २   ३ १ २
इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत् । ब्रह्मकृते विपश्चिते
३ १ २   १ २   ३ १ २ ३ १र   २र   ३ १ २
पनस्यवे । त्वमिन्द्राभि भूरसि त्वं सूर्य्यं मरोचयः । विश्वकर्मा
३ १ २   ३ १ २   ३ २ ३   १ २ ३   २ १ २
विश्वदेवो महाँअसि । विभ्राजञ्ज्योतिषा स्वा३रगच्छो
३ २ ३ २   ३ १ २   ३ १ २
रोचनन्दिवः । देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे ।

साम. उ. ३–२२–३ ।

१ २   ३ १ २ ३ १ २ ३   २ ३ १ २   १ २ ३
सना च सोम जेषि च पवमान महिश्रवः । अथा नो
१ २   २ ३   २ ३   २ ३   २ १ २   ३
वस्यसस्कृधि । सना ज्योतिः सना स्वा३र्विश्वा च सोम

१ २   १ २ ३ १ २   २ ३ १ २ ३ २उ ३ १ २   ३
सौभगा । अथा नो वस्यसस्कृधि । सना दक्षमुतक्रतुमप सोम
१ २   १ २ ३ १ २   १ २   ३ २ ३
मृधो जहि । अथा नो वस्यसस्कृधि । पवीतारः पुनीतन
२ ३ १ २ ३ १ २   १ २ ३ १ २   १र २र ३ १ २ ३
सोममिन्द्राय पातवे । अथा नो वस्यसस्कृधि । त्वं सूर्ये न आभज
२ ३ २ ३ २ ३ १ २   १ २ ३ १ २   २ ३ २ ३
तव क्रत्वा तवोतिभिः । अथा नो वस्यसस्कृधि । तव क्रत्वा
२ ३ २ ३ १ २ ३ १ २   १ २ ३ १ २
तवोति भिर्ज्योक् पश्येम सूर्यम् । अथा नो वस्यसस्कृधि ।
३क २र   ३ १ २ ३ १ २ ३ २   १ २ ३ १ २
अभ्यर्ष स्वायुध सोम द्विबर्हसं रयिम् । अथा नो वस्यसस्कृधि ।
३ २ १ २   ३ १ २ ३ १ २   ३ २   १ २ ३
अभ्या३र्षानपच्युतो वाजिनन्त्समत्सु सासहिः । अथा नो
१ २   २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २   १ २ ३
वस्यसस्कृधि । त्वां यज्ञैरवीवृधन् पवमान विधर्मणि । अथा नो
१ २   ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २   १ २
वस्यसस्कृधि रयिं नश्चित्रमश्विनमिन्दो विश्वायुमा भर । अथा
३ १ २
नो वस्यसस्कृधि ।

साम. उ. ४-४-२।

१ २   ३ १ २ २ १र २र   ३ १ २   ३ १र २र   ३ २   १ २
अक्रान्त्समुद्रः प्रथमे विधर्मन् जनयन् प्रजा भुवनस्य गोपाः । वृषा

३ २ ३ २ २ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ १र २र १ २
पवित्रे अधि सानो अव्ये बृहत्सोमो वावृधे स्वानो अद्रिः । मत्सि
३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ १ २ २ ३
वायुमिष्टये राधसे नो मत्सि मित्रा वरुणा पूयमानः । मत्सि
२ ३ १ २ ३ १ २ ३ २उ ३ १ २ ३ १ २
शर्धो मारुतं मत्सि देवान् मत्सि द्यावापृथिवी देव सोम ।
३ १र २र ३ १ २ ३ १र २र ३ २
महत्तत्सोमो महिषश्चकारापां यद्गर्भोऽवृणीत देवान् ।
१ २ ३ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ २ ३ २ ३ १ २
अदधादिन्द्रे पवमान ओजोऽजनयत् सूर्येज्योतिरिन्दुः ।

8886 साम. उ. ५-१-३ ।

३ १ २ ३ १ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ १ २ ३
अग्नि हिन्वन्तु नो धियः सप्तिमाशुमिवाजिषु । तेन जेष्म
१ २ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ १ २
धनंधनम् । यया गा आकरामहै सेनयाग्ने तवोत्या । तां नो
३ १ २ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १र १र ३ १ २
हिन्व मघत्तये । आग्ने स्थूरं रयिं भर पृथुं गोमन्तमश्विनम् ।
३ २उ ३ १ २ ३ २ २ ३ १ २ ३ २ ३ १र २र
अङ्धि खं वर्तया पविम् । अग्ने नक्षत्रमजरमा सूर्यं रोहयो
३ २ २ ३ २ ३ १ २ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
दिवि । दधज्ज्योतिर्जनेभ्यः । अग्ने केतुर्विशामसि प्रेष्ठ श्रेष्ठः
३ २ १ २ ३ २उ ३ १ २
उपस्थसत् । बोधा स्तोत्रे वयो दधत् । सा. उ. ७-१५-४ ।

३ २ ३ १ २ ३ २उ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २

विभ्राड् बृहत्पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम् ।

१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १र २र

वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजाः पिपर्त्ति बहुधा विराजति ।

३ २ ३ १र २र ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १र २र

विभ्राड् बृहत्सुभृतं वाजसातमं धर्म दिवो धरुणे सत्यमर्पितम्

३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २उ

अमित्रहा वृत्रहा दस्युहन्तमं ज्योतिर्जज्ञे असुरहा सपत्नहा । इदं

३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २

श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमं विश्वजिद्धनजिदुच्यते बृहत् ।

३ ३ ३ २उ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २

विश्वभ्राड्भ्राजो महि सूर्यो दृश उरु पप्रथे सह ओजो अच्युतम् ।

सा. उ. ६–५–३ ।

३ २उ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २

इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरागाच्चित्रः प्रकेतो अजनिष्ट विभ्वा ।

२ ३ १ २ ३ २ २ २ ३ २र ३ २ ३ १ २ १ २ ३

यथा प्रसूता सवितुः सवायैवा रात्र्युषसे योनिमारैक् । रुशद्वत्सा

१ २ ३ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ १ २ ३ १ २

रुशती श्वेत्यागादारैगुक्रृष्णासदनान्यस्याः । समान बन्धू अमृते

३ २उ २ १ २ ३ २ ३ २उ ३ १ २ ३ २उ

अनूची द्यावावर्णं चरत आमिनाने । समानो अध्वास्वस्रोरनन्त-

३ १ २ ३ १ २ १ २ ३ १ २ ३ २ ३

स्तमन्यान्या चरतो देवशिष्टे । न मेथेते न तस्थतुः सुमेके

२ ३ २ ३ १ २ ३ १ २

नक्तोषासा समनसा विरूपे । सा. उ ८-१४-१ ।

३ २उ ३ १ २ ३ २उ ३ २ ३ ३ १ २ २ ३

अग्नि ज्योतिज्योतिरग्निरिन्द्रो ज्योतिज्योतिरिन्द्रः । सूर्यो

२ ३ २ ३ १ २ १ २ ३ १र २र ३ १ २ ३ १ २

ज्योति ज्योतिः सूर्यः । पुनरूर्जा निवर्तस्व पुनरग्न इषायुषा ।

१ २ १ ३ २ ३ २ ३ १र २र ३ २ ३ १ २ ३ १ २

पुनर्नः पाह्यंहसः सह रय्या निवर्तस्वाग्ने पिन्वस्व धारया ।

३ १ २ ३ २ ३ १ २

विश्वप्स्न्या विश्वतस्परि । सा. उ. ९-८-१ ।

१ २ ३ २ ३ १र २र ३ १ २ ३ २उ ३ १ २ ३

अश्विना वर्तिरस्मदा गोमद् दस्रा हिरण्यवत् । अर्वाग्रथं समनसा

१ २ २उ ३ १ २ ३ १ २ ३ १र २र

नि यच्छतम् । एह देवा मयोभुवा दस्रा हिरण्यवर्त्तनी ।

३ १ २ ३ १ २ २ ३ २उ ३ २ ३ २उ

उषर्बुधो वहन्तु सोमपीतये । यावित्था श्लोकमा दिवो

३ १ २ ३ १ २ २ ३ १ २ ३ २

ज्योतिर्जनाय चक्रथुः । आ न ऊर्जं वहतमश्विना युवम् ।

सा. उ. ८-६-३ ।

२ ३ १ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ १र २र ३ १ २ १ २

प्रास्य धारा अक्षरन् वृष्णः सुतस्यौजसः देवां अनु प्रभूषतः । सप्ति

३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ १ २ ३ २ ३क २र
मृजन्ति वेधसो गृणन्तः कारवो गिरा । ज्योतिर्जज्ञानमुक्थ्यम् ।
३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ १ २ ३ १ २
सुषहा सोम तानि ते पुनानाय प्रभूवसो । वर्धा समुद्रमुक्थ्य ।
सा. उ. ६–१–२ ।

२ ३ २ ३ २ ३ २उ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदिस्पृशम् । ऋध्यामा
३ १ २ २ ३क २र ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
त ओहैः । अधा ह्यग्ने क्रतोर्भद्रस्य दक्षस्य साधोः । रथीर्ऋतस्य
१ २ ३ १ २ ३ १र २ ३ १र २र ३ २ १र २र
बृहतो बभूथ । एभिर्नो अर्कैर्भवा नो अर्वाङ् स्वा३र्ण ज्योतिः ।
२ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
अग्ने विश्वेभिः सुमना अनीकैः । सा. उ. ६–५–३ ।

२ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ १ ३ १
बण्महाँ असि सूर्य बडादित्य महाँ असि । महस्ते सतो महिमा
२ ३ १ २ २ १ २ १ २ ३ १ २ ३ १ २
पनिष्टम मह्ना देव महाँ असि । बट् सूर्य श्रवसा महाँ असि
३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३क २र ३ १ २ ३ २उ
सत्रा देव महां असि । मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभु
३ १ २
ज्योतिरदाभ्यम् । सा. उ. ६–६–२ ।

१ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ १ २ ३ १
इन्द्र क्रतुन्न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा । शिक्षाणो अस्मिन्

२ ३ १ २ ३ १र २र २ ३ १ २ ३ १ २
पूरुहूत यामनि जीवाज्योतिरशीमहि । मा नो अज्ञाता वृजना
३ २ १ १ ३ १ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
दुराध्यो३मा शिवासोऽवक्रमुः । त्वया वयं प्रवतः शश्वतीः
३ १ २
रपोऽतिशूर तरामसि । सा. उ. ६-६-१ ।

३ १ २ ३ २ ३ २ १ २ ३ १ २ १ २ ३ १ २
ऋतावानं वैश्वानरमृतस्य ज्योतिषस्पतिम् । अजस्रं घर्ममीमहे ।
२ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३क २र ३ २ ३ १र २र ३ २ ३ २
य इदं प्रतिपप्रथे यज्ञस्य स्वरुत्तिरन् । ऋतूनुत्सृजते वशी । अग्निः
३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २उ ३ १ २
प्रियेषु धामसु कामो भूतस्य भव्यस्य । सम्राडेको विराजति ।
साम. उ. ८-१९-१ ।

१ २ ३ १ २ ३ १ २ २ ३ २ ३ १ २
आते अग्न इधीमहि द्युमन्तं देवाजरम् । यद्धस्या ते पनीयसी
३ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ २ ३ १ २ १ २ ३ २ ३ २
समिद्दीदयति द्यवीषं स्तोतृभ्य आ भर । आ ते अग्न ऋचा हविः
३ १ २ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
शुक्रस्य ज्योतिषस्पते । सुश्चन्द्र दस्म विश्पते हव्यवाट् तुभ्यं
३ १ २ ३ २ ३ १ २ १र २र ३ १ २
हूयत इषं स्तोतृभ्य आ भर । ओभे सुश्चन्द्र विश्पते दर्वी

३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
श्रीणीष आसनि । उतो न उत्पुपूर्या उक्थेषु शवसस्पत इदं
३ २ ३ १ २
स्तोतृभ्य आ भर । साम. उ. ३–२१–२।

२ ३ १र २र ३ २ ३ २३ १ २ ३ २
त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयत्स्वङ्गाः ।
१र २र ३ २ १ २ ३ १र २र ३ १र २र
त्व मातनोरुर्व३न्तरिक्षन्त्वञ्ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ।
सा. पू. ६–३–३।

१र २र ३ १ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ १ २ ३ १ २
आ जागृवि विंप्र ऋतं मतीनां सोमः पुनानो असदच्चमूषु ।
१ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
सपन्ति यं मिथुनासो निकामा अध्वर्यवो रथिरासः सुहस्ताः ।
१ २ ३ २उ ३ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ १ २ ३ १र २र ३ २
स पुनान उपसूरे दधान ओभे अप्रा रोदसी वी ष आवः । प्रिया-
३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १र २र ३ २ ३ १र २र १
चिद्यस्य प्रियसास ऊती सतो धनकारिणे न प्रयंसत् । स
२ ३ १र २र ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
वर्द्धिता वर्द्धनः पूयमानः सोमो मीढ्वां अभि नो ज्योतिषावीत् ।
१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १र २र ३ २
यत्र नः पूर्वे पितरः पदज्ञाः स्वर्विदो अभिगा अद्रिमिष्णन् ।
साम. उ. ६–४–३।

३ २ ३ २ ३ २ ३ १र २र ३ २ ३ २ ३ १र २र
अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् । अपां रेतांसि
१ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३क २र ३ १
जिन्वति । ईशिषे वार्यस्य हि दात्रस्याग्नेः स्वः पतिः । स्तोता
३ २ ३ १ २ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १र २र २ ३
स्यां तव शर्मणि । उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते तव
१ २ ३ १ २
ज्योतींष्यर्चयः । साम. उ. ७–१६–३ ।

३ २ ३क २र ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३क २र
अञ्जते व्यञ्जते समञ्जते क्रतुं रिहन्ति मध्वाभ्यञ्जते ।
१ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
सिन्धोरुच्छ्वासे पतयन्तमुक्षणं हिरण्यपावाः पशुमप्सु गृभ्णते ।
३ २ ३ १ २ ३ १र २र १ ३
विपश्चिते पवमानाय गायत मही न धारात्यन्धो अर्षति । अहि
२ ३ १र २र ३ २ ३ २ ३ १र २र ३ २ ३ १ २ ३ १र
र्न जूर्णामति सर्पति त्वचमत्यो न क्रीडन्नसरद्वृषा हरिः । अग्रेगो
२र ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ १ २ ३ १ २
राजाप्यस्तविष्यते विमानो अह्नाम्भुवनेष्वर्पितः । हरिर्घृतस्नुः
३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३क २र
सुदृशीको अर्णवो ज्योतीरथः पवते राय ओक्यः ।
साम. ७–२१–३ ।

अस्य देवाः प्रदिशि ज्योतिरस्तु सूर्यो अग्निरुत वा हिरण्यम् ।
सपत्ना अस्मदधरे भवन्तूत्तमं नाकमधि रोहयेमम् ।
अथर्व. १-९-२ ।

अपां तेजो ज्योतिरोजो बलं च वनस्पतीनामुत वीर्याऽणि ।
इन्द्र इवेन्द्रियाण्यधि धारयामो अस्मिन् तद् दक्षमाणो
बिभरद्धिरण्यम् । अथर्व. १-३५-३ ।

शुक्रोऽसि भ्राजोऽसि स्वरसि ज्योतिरसि ।
आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम । अथर्व. २-११-५ ।

पृष्ठात् पृथिव्या अहमन्तरिक्षमारुहमन्तरिक्षाद् दिवमारुहम् ।
दिवो नाकस्य पृष्ठात् स्व१र्ज्योतिरगामहम् ।
अथर्व. ४-१४-३ ।

समं ज्योतिः सूर्येणाह्ना रात्री समावती ।
कृणोमि सत्यमूतयेऽरसाः सन्तु कृत्वरीः । अथर्व. ४-१८-१ ।

दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचा मिमाना यज्ञं मनुषो यजध्यै ।
प्रचोदयन्ता विदथेषु कारू प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता ।
अथर्व. ५-१२-७ ।

वृषा मे रवो नभसा न तन्यतुरुग्रेण ते वचसा बाध आदु ते ।
अहं तमस्य नृभिरग्रभं रसं तमस इव ज्योतिरुदेतु सूर्यः ।
अथर्व. ५-१३-३ ।

तनूष्टे वाजिन् तन्वं१ नयन्ती वाममस्मभ्यं धावतु शर्म तुभ्यम् ।
अह्रुतो महो धरुणाय देवो दिवीऽवज्योतिः स्वमा मिमीयात् ।

अथर्व. ६-९२-३ ।

अयं सहस्रमा नो दृशे कवीनां मतिर्ज्योतिर्विधर्मणि ।

अथर्व. ७-२२-१ ।

उद्वयं तमसस्परि रोहन्तो नाकमुत्तमम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् । अथर्व. ७-५३-७ ।

मा गतानामा दीधीथा ये नयन्ति परावतम् । आ रोह तमसो ज्योतिरेह्या ते हस्तौ रभामहे ।

अथर्व. ८-१-८ ।

अजो अग्निरजमु ज्योतिराहुरजं जीवता ब्रह्मणे देयमाहुः ।
अजस्तमांस्यप हन्ति दूरमस्मिँल्लोके श्रद्दधानेन दत्तः ।
पञ्चौदनः पञ्चधा विक्रमतामाक्रंस्यमानस्त्रीणि ज्योतींषि ।
ईजानानां सुकृतां प्रेहि मध्यं तृतीये नाके अधि वि श्रयस्व ।
एतद् वो ज्योतिः पितरस्तृतीयं पञ्चौदनं ब्रह्मणेऽजं ददाति ।
अजस्तमांस्यप हन्ति दूरमस्मिँल्लोके श्रद्दधानेन दत्तः ।

अथर्व. ९-५-७. ८. ११ ।

व्यवात् ते ज्योतिरभूदप त्वत् तमो अक्रमीत् ।
अप त्वन्मृत्युं निर्ऋतिमप यक्ष्मं नि दध्मसि ।

अथर्व. ८-१-२१ ।

जीवतां ज्योतिरभ्येह्यर्वाङ् त्वा हरामि शतशारदाय।
अवमुञ्चन् मृत्युपाशानशस्तिं द्राघीय आयुः प्रतरं ते दधामि।

अथर्व ८-२-२।

असपत्नं नो अधरादसपत्नं न उत्तरात्।
इन्द्रा सपत्नं नः पश्चाज्ज्योतिः शूर पुरस्कृधि।

अथर्व. ८-५-१७।

ये पूर्वे वध्वोऽ यन्ति हस्ते शृङ्गाणि बिभ्रतः। आपा केस्थाः प्रहासिन स्तम्बे ये कुर्वते ज्योतिस्तानितो नाशयामसि।

अथर्व. ८-६-१४।

पञ्च रुक्मा ज्योतिरस्मै भवन्ति वर्म वासांसि तन्वे भवन्ति।
स्वर्गं लोकमश्नुते योऽजं पञ्चौदनं दक्षिणाज्योतिषं ददाति।

अथर्व. ९-५-२६।

पराक् ते ज्योतिरपथं ते अर्वागन्यत्रास्मदयनाकृणुष्व।
परेणेहि नवतिं नाव्याऽ अति दुर्गाः स्रोत्या मा क्षणिष्ठाः परेहि।

अथर्व. १०-१-१६।

इदं मे ज्योतिरमृतं हिरण्यं पक्वं क्षेत्रात् कामदुघा म एषा।
इदं धनं नि दधे ब्राह्मणेषु कृण्वे पन्थां पितृषु यः स्वर्गः।

अथर्व. ११-१-२८।

यन देवा ज्योतिषा द्यामुदायन् ब्रह्मौदनं पक्त्वा सुकृतस्य लोकम्। तेन गेष्म सुकृतस्य लोकं स्वरारोहन्ता अभि नाकमुत्तमम्।

अथर्व. ११-१६. २८. ३७।

त्वज्जातास्त्वयिं चरन्ति मर्त्यास्त्वं बिभर्षि द्विपदस्त्वं चतुष्पदः ।
तवेमे पृथिवि पञ्च मानवा येभ्यो ज्योतिरमृतं मर्त्येभ्य
उद्यन्त्सूर्यो रश्मिभिं रातनोति ।

अथर्व. १२-१-१५ ।

समग्नयो विदुरन्यो अन्यं य ओषधीः सचते यश्च सिन्धून् ।
यावन्तो देवा दिव्याऽतपन्ति हिरण्यं ज्योतिः पचतो बभूव ।

अथर्व. १२-३-५० ।

उत् केतुना बृहता देव आगन्नपावृक् तमोभि ज्योतिरश्रैत् ।
दिव्यः सुपर्णः स वीरो व्यख्यददितेः पुत्रो भुवनानि विश्वा ।
उच्चा पतन्तमरुणं सुपर्णं मध्ये दिवस्तरणिं भ्राजमानम् ।
पश्याम त्वा सवितारं यमाहुरजस्रं ज्योतिर्यद विन्ददत्रिः ।

अथर्व. १३-२-६. ३६ ।

बृहदेनमनु वस्ते पुरस्ताद् रथन्तरं प्रतिगृह्णाति पश्चात् ।
ज्योतिर्वसाने सदमप्रमादम् । तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य
एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति । उद् वेपय रोहित प्र क्षिणीहि
ब्रह्मज्यस्य प्रति मुञ्च पाशान् ।

येनादित्यान् हरितः संवहन्ति येन यज्ञेन बहवो यन्ति
प्रजानन्तः । यदेकं ज्योतिर्बहुधा विभाति । तस्य देवस्य
क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति । उद् वेपय
रोहित प्र क्षिणीहि ब्रह्मज्यस्य प्रति मुञ्च पाशान् ।

अथर्व. १३-३-११. १७ ।

सुश्रुतिश्च मोपश्रुतिश्च मा हासिष्टां सौपर्णं चक्षुरजस्रं ज्योतिः ।

अथर्व. १६-२-५ ।

यस्मिन् देवा विदथे मादयन्ते विवस्वतः सदने धारयन्ते ।
सूर्ये ज्योतिरदधुर्मास्य१क्तून् परि द्योतनिं चरतो अजस्रा ।

अथर्व. १८-१-३५ ।

आ रोहत दिवमुत्तमामृषयो मा बिभीतन । सोमपाः सोमपायिनः इदं वः क्रियते हविरगन्म ज्योतिरुत्तमम् ।

अथर्व. १८-३-६४ ।

इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ।

अथर्व. १८-३-६७ ।

उरुं नो लोकमनु नेषि विद्वान्त्स्व१र्यज्ज्योतिरभयं स्वस्ति ।
उग्रा त इन्द्र स्थविरस्य बाहू उप क्षयेमशरणा बृहन्ता ।

अथर्व. १६-१५-४ ।

इन्द्रः स्वर्षा जनयन्नहानि जिगायोशिग्भिः पृतना अभिष्टिः ।
प्रारोचयन्मनवे केतुमह्नामविन्दज्ज्योतिर्बृहते रणाय ।

अथर्व. २०-११-४ ।

अस्मै भीमाय नमसा समध्वर उषो न शुभ्र आ भरा पनीयसे ।
यस्य धाम श्रवसे नामेन्द्रियं ज्योतिरकारि हरितो नायसे ।

अथर्व. २०-१५-३ ।

अभि श्यावं न कृशनेभिरश्वं नक्षत्रेभिः पितरो द्यामपिंशन् ।
राम्यां तमो अदधुर्ज्योतिरहन् बृहस्पतिर्भिनदद्रिं विददू गाः ।
अथर्व. २०-१६-११ ।

वयो न वृक्षं सुपलाशमासदन्त्सोमास इन्द्रं मन्दिनश्चमूषदः ।
प्रैषामनीकं शवसा दविद्युतद् विदत् स्व१र्मनवे ज्योतिरार्यम् ।

वृषा न क्रुद्धः पतयद् रजःस्वा यो अर्यपत्नीरकृणोदिमा अपः ।
स सुन्वते मघवा जीरदानवेऽविन्दज्ज्योतिर्मनवे हविष्मते ।

उज्जायतां परशुर्ज्योतिषा सह भूया ऋतस्य सुदुघा पुराणवत् ।
विरोचतातामरुषो भानुना शुचिः स्व१र्ण शुक्रं शुशुचीत सत्पतिः ।
अथर्व. २०-१७-४. ८. ९ ।

प्रणेतारं वस्यो अच्छा कर्तारं ज्योतिः समत्सु ।
सासह्वांसं युधामित्रान् । अथर्व. २०-४६-१ ।

बट् सूर्य श्रवसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि ।
मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभुज्ज्योतिरदाभ्यम् ।
अथर्व. २०-५८-४ ।

यस्यामितानि वीर्या न राधः पर्येतवे ।
ज्योतिर्न विश्वमभ्यस्ति दक्षिणा । अथर्व. २०-६५-३ ।

स्वर्यद् वेदिं सुदृशीकमर्कैर्महि ज्योतीरुरुचुर्यद्ध वस्तोः ।
अन्धा तमांसि दुधिता विचक्षे नृभ्यश्चकार नृतमो अभिष्टौ ।

अथर्व. २०-७७-४ ।

इन्द्र क्रतुं न आभर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ।

अथर्व. २०-७९-१ ।

अवो द्वाभ्यां पर एकया गा गुहा तिष्ठन्तीरनृतस्य सेतौ ।
बृहस्पतिस्तमसि ज्योतिरिच्छन्नुदुस्रा आकर्वि हि तिस्र आवः ।
यदा वाजमसनद् विश्वरूपमा द्यामरुक्षदुत्तराणि सद्म ।
बृहस्पतिं वृषणं वर्धयन्तो नाना सन्तो बिभ्रतो ज्योतिरासा ।

अथर्व. २०-९१-४. १० ।

आ रोह तल्पं सुमनस्यमानेह प्रजां जनय पत्ये अस्मै ।
इन्द्राणीव सुबुधा बुध्यमाना ज्योतिरग्रा उषसः प्रतिजागरासि ।

अथर्व. १४-२-३१ ।

शं नो अग्नि ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् । शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शंन इषिरो अभिवातु वातः ।

अथर्व. १९-१०-४ ।

तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य ।
विश्वमा भासि रोचन ।

अथर्व. १३-२-१९ ।

तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य ।
विश्वमा भासि रोचन । अथर्व. २०-४७-१६ ।

स बुध्न्यादाष्ट्र जनुषोऽभ्यग्रं बृहस्पतिर्देवता तस्य सम्राट् ।
अहर्यच्छुक्रं ज्योतिषो जनिष्टाथ द्युमन्तो वि वसन्तु विप्राः ।
अथर्व ४-१-५ ।

वाताज्जातो अन्तरिक्षाद् विद्युतो ज्योतिषस्परि ।
स नो हिरण्यजाः शङ्खः कृशनः पात्वंहसः ।
अथर्व. ४-१०-१ ।

अग्रमेष्योषधीनां ज्योतिषेवाभिदीपयन् ।
उत त्रातासि पाकस्याथो हन्तासि रक्षसः ।
अथर्व. ४-१९-३ ।

अस्मिन् वसु वसवो धारयन्त्विन्द्रः पूषा वरुणो मित्रो अग्निः ।
इममादित्या उत विश्वे च देवा उत्तरस्मिञ्ज्योतिषि धारयन्तु ।
अथर्व. १-९-१ ।

यः प्राणदः प्राणदवान् बभूव यस्मै लोका घृतवन्तः क्षरन्ति ।
ज्योतिष्मतीः प्रदिशो यस्य सर्वास्तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् ।
अथर्व. ४-३५-५ ।

ऋतावानं वैश्वानरमृतस्य ज्योतिषस्पतिम् ।
अजस्रं घर्ममीमहे । अथर्व. ६-३६-१ ।

मह्यमापो मधुमदेरयन्तां मह्यं सूरो अभरज्ज्योतिषे कम् ।
मह्यं देवा उत विश्वे तपोजा मह्यं देवः सविता व्यचो धात् ।

अथर्व. ६-६१-१ ।

तदग्ने चक्षुः प्रति धेहि रेभे शफारुजो येन पश्यसि यातुधानान् ।
अथर्ववज्ज्योतिषा दैव्येन सत्यं धूर्वन्तमचितं न्योष ।
वि ज्योतिषा बृहता भात्यग्निराविर्विश्वानि कृणुते महित्वा ।
प्रादेवीर्मायाः सहते दुरेवाः शिशीते शृङ्गे रक्षोभ्यो विनिक्ष्वे ।

अथर्व. ८-३-२१, २४ ।

उत्क्रामातः परि चेद तप्तस्तप्ताच्चरोरधि नाकं तृतीयम् ।
अग्नेरग्निरधि सं बभूविथ ज्योतिष्मन्तमभि लोकं जयैतम् ।

अथर्व. ९-५-६ ।

ज्योतिष्मतो लोकाञ्जयति य एवं वेद । अथर्व. ९-११-१४ ।

अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या ।
तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः ।

अथर्व. १०-२-३१ ।

अप तस्य हतं तमो व्यावृत्तः स पाप्मना ।
सर्वाणि तस्मिञ्ज्योतींषि यानि त्रीणि प्रजापतौ ।

अथर्व. १०-४-४० ।

सं हि सूर्येणागत समु सर्वेण चक्षुषा ।
वशा समुद्रमत्यख्यद् भद्रा ज्योतींषि बिभ्रती ।

अथर्व. १०-१०-१५ ।

दिशो ज्योतिष्मतीरभ्यावर्ते । ता मे द्रविणं यच्छन्तु ता मे ब्राह्मण वर्चसम् । अथर्व. १०-५-३८ ।

उभे नभसी उभयांश्च लोकान् ये यज्वनामभि जिताः स्वर्गाः । तेषां ज्योतिष्मान् मधुमान् यो अग्रे तस्मिन् पुत्रैर्जरसि सं श्रयेथाम् ।

सप्त मेधान् पशवः पर्यगृह्णन् य एषां ज्योतिष्माँ उत यश्चकर्श । त्रयस्त्रिंशद् देवतास्तान्त्सचन्ते स नः स्वर्गमभि नेष लोकम् ।

अथर्व. १२-३-६. १६ ।

ऊर्ध्वो रोहितो अधि नाके अस्थाद् विश्वारूपाणि जनयन् युवा कविः । तिग्मेनाग्निर्ज्योतिषा वि भाति तृतीये चक्रे रजसि प्रियाणि । अथर्व. १३-१-११ ।

तिग्मो विभ्राजन् तन्वं१ शिशानो रंगमासः प्रवतोररराणः । ज्योतिष्मान् पक्षी महिषो वयोधा विश्वा आस्थात् प्रदिशः कल्पमानः ।

चित्रं देवानां केतुरनीकं ज्योतिष्मान् प्रदिशः सूर्य उद्यन् । दिवाकरोऽति द्युम्नैस्तमांसि विश्वातारीद् दुरितानि शुक्रः । पर्यस्य महिमा पृथिवीं समुद्रं ज्योतिषा विभ्राजन् परि द्यामन्तरिक्षम् । सर्वं संपश्यन्त्सुविदत्रो यजत्र इदं शृणोतु यदहं ब्रवीमि । अथर्व. १३-२-३३. ३४ ४५. ।

अग॑न्म स्वः॑ स्व॒ऽरगन्म॒ सं सूर्य॑स्य ज्योति॑षागन्म ।

अथर्व. १६-९-३ ।

प्र॒जाप॑ते॒रावृ॑तो॒ ब्रह्म॑णा॒ वर्म॑णा॒हं क॒श्यप॑स्य॒ ज्योति॑षा॒ वर्च॑सा च ।
ज॒रद॑ष्टिः कृ॒तवी॑र्यो॒ विहा॑याः स॒हस्रा॑युः सुकृ॑तश्चरेयम् ।
परी॑वृतो॒ ब्रह्म॑णा॒ वर्म॑णा॒हं क॒श्यप॑स्य ज्योति॑षा॒ वर्च॑सा च ।
मा मा॒ प्राप॒न्निष॑वो॒ दैव्या॒ या मा मानु॑षी॒रव॑सृष्टा व॒धाय॑ ।

अथर्व. १७-१-२७. २८ ।

इ॒दं त॒ एकं॑ प॒र ऊं॑ त॒ एकं॑ तृ॒तीये॑न॒ ज्योति॑षा॒ सं वि॑शस्व ।
सं॒ वेश॑ने त॒न्वा॒३ चारु॑रेधि प्रि॒यो दे॒वानां॑ प॒रमे स॒धस्थे॑ ।

अथर्व. १८-३-७ ।

ई॒जा॒नश्चि॒त मारु॑क्षद॒ग्निं नाक॑स्य पृ॒ष्ठाद् दिव॑मुत्पति॒ष्यन् ।
तस्मै॑ प्र भा॑ति॒ नभ॑सो॒ ज्योति॑षीमा॒न्त्स्व॒र्गः पन्था॑ः सु॒कृते॑ दे॒वयान॑ः ।

अथर्व. १८-४-१४ ।

या न॒ः पीप॑रद॒श्विना॒ ज्योति॑ष्मती॒ तम॑स्ति॒रः ।
ताम॒स्मे रा॑सता॒मिष॑म् ।

अथर्व. १९-४०-४ ।

अप॒ ज्योति॑षा॒ तमो॑ अ॒न्तरि॑क्षादु॒द्नः शीपा॑लमिव॒वात॑ आजत् ।
बृह॒स्पति॑रनु॒मृश्या॑ व॒लस्या॒भ्रमि॑व॒ वात॒ आ च॑क्र॒ आ गाः ।

अथर्व. २०-१६-५ ।

वि॒भ्राजं॒ ज्योति॑षा॒ स्व॑१॒रग॑च्छो रो॒च॒नं दि॒वः ।
दे॒वास्त॑ इन्द्र स॒ख्याय॑ येमिरे ।

अथर्व. २०-६२-७ ।

येन ज्योतींष्यायवे मनवे च विवेदिथ ।
मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि । अथर्व. २०-६१-१ ।

बृहस्पतिः प्रथमं जायमानो महो ज्योतिषः परमे व्योमन् ।
सप्तास्यस्तुविजातो रवेण वि सप्तरश्मिरधमत् तमांसि ।
अथर्व. २०-८८-४ ।

चित्रं देवानां केतुरनीकं ज्योतिष्मान् प्रदिशः सूर्य उद्यन् ।
दिवाकरोऽति द्युम्नैस्तमांसि विश्वातारीद् दुरितानि शुक्रः ।
अथर्व. २०-१०७-१३ ।

रचनात्मक योजना

भूमण्डल पर वेद के प्रचार प्रसार के लिए—

दक्षिण भारत में संस्कृत और अंग्रेजी माध्यम से समान योग्यता वाले छात्रों को तैयार करने के लिए आत्मनिर्भर गुरुकुल की स्थापना के लिए—

फिक्स्ड् डिपाजिट स्थिर निधि की सशक्त योजना—

अक्षय धर्म कोष

अकाउण्ट नं.

सिंडीकेट बैंक मोजमजाही मार्केट
हैदराबाद आन्ध्रप्रदेश

इसमें हर प्रसन्नता के अवसर पर धन जमा कराइए ! इसमें दिया गया दान हमेशा सुरक्षित रहेगा और प्रतिष्ठान इसके सूद को लाभकारी योजना में लगाएगा ! किसी की पुण्य स्मृति हो या किसी का जन्म दिन—इस निधि में धन भेजिए।

वेदभूषण
अधिष्ठाता

फोन 41112

अन्तर्राष्ट्रीय वेद प्रतिष्ठान हैदराबाद 500027

यज्ञ का महत्त्व

"जैसे ईश्वर ने सत्य भाषणादि धर्मव्यवहार करने की आज्ञा दी मिथ्या भाषणादि की नहीं, जो इस आज्ञा से उल्टा काम करता है वह अत्यन्त पापी होता है और ईश्वर की न्याय-व्यवस्था से उसको क्लेश भी होता है। वैसे ही ईश्वर ने मनुष्यों को 'यज्ञ' करने की आज्ञा दी है, उस को जो नहीं करता वह भी पापी होके दुःख का भागी होता है।"

x x x

"इस लिए आर्यवर शिरोमणि महाशय ऋषि, महर्षि, राजे महाराजे लोग बहुत-सा होम करते और कराते थे। जब तक होम करने को प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था। अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाय।"

x x x

"अग्निहोत्रादि यज्ञों से वायु वृष्टि जल की शुद्धि आरोग्यता का होना उससे धर्म अर्थ काम और मोक्ष की सिद्धि होती है उसको न जानकर वेद, ईश्वर, वेदोक्त धर्म की निन्दा करना धूर्तों का धर्म है।"

x x x

"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।"

महर्षि दयानन्द सरस्वती